बाँटें जीवन के मोती

अपने हिन्दू भाई बहनों को परमेश्वर के प्रेम का सुसमाचार कैसे सुनायें

बृजेश चौरोटिया

बाँटें
जीवन
के
मोती

बाँटें जीवन के मोती

अपने हिन्दू भाई-बहनों को परमेश्वर के प्रेम का सुसमाचार कैसे सुनायें

बृजेश चोरोटिया

बाँटें जीवन के मोती

हिंदू भाई-बहनों को परमेश्वर के प्रेम का सुसमाचार कैसे सुनायें

कॉपीराइट © 2008, बृजेश चोरोटिया

पहला संस्करण 2008

इस पुस्तक में लिखे सभी बाइबल वचन, बाइबल सोसायटी ऑफ़ इंडिया द्वारा हिन्दी में प्रकाशित 'पवित्र बाइबल' (The Holy Bible, Hindi O.V. Re-edited, ISBN 81-221-2141-1) से लिये गये हैं।

सर्वाधिकार सुरक्षित

इस पुस्तक का कोई भी भाग तथ्यों को बदलकर किसी भी रूप में लेखक की लिखित अनुमति के बिना नहीं संचारित किया जा सकता है। तथ्यों को बदले बिना सुसमाचार प्रचार के उद्देश्य से इस क़िताब की फोटोकॉपी इत्यादि करने की अनुमति लेखक की ओर से इसी अधिकार सूचना में दी जाती है।

प्रकाशक:

बृजेश चोरोटिया

Chorotia@gmail.com

मूल्य: 40 रूपये

स्मृति

मेरे दादाजी स्व. श्री रामदेव चोरोटिया की याद में

समर्पित

यह क़िताब प्रभु यीशु मसीह को तथा पवित्र आत्मा को समर्पित है जिन्होंने मुझे अपने असीम अनुग्रह से मेरे पापों की क्षमा तथा अनंतकाल का जीवन दिया है।

कमरे की ठंडक में बैठकर किताब लिखना एक बात है और सेवा-क्षैत्र में रहकर, सुसमाचार को दिन-दुपहरी में मोक्ष के भूखे-प्यासे लोगों तक पहुँचाना और बात है। मैं अपने आप को उन सब भाई-बहनों के समक्ष कुछ भी नहीं पाता हूँ जो सभी कमी-घटियों तथा शारीरिक यातनाओं को सहते हुये भी मसीह का सुसमाचार लोगों तक पहुँचाते हैं। मैं उनके समर्पण को नमन करता हूँ और यह किताब उनको भी समर्पित करता हूँ।

अंत में इसे मैं अपने उन सभी हिंदू भाई-बहनों को भी समर्पित करता हूँ जिन्होंने प्रभु यीशु पर विश्वास किया है और अब अपने प्रियजनों तक यह सच्चाई पहुँचाना चाहते हैं। मेरा प्रयास है कि मैं प्रभु यीशु मसीह का मोक्षदान का सुसमाचार पहुँचाने के सही तरीकों के बारे में एक स्पष्ट तस्वीर दे सकूँ खास तौर पर उन सेवकों को जो सेवा-क्षैत्र में रहकर सुसमाचार प्रचार करते हैं।

आभार

किताब को लिखना और उसे सही रूप देना अकेले व्यक्ति का काम नहीं है और बहुत से लोग इस काम में मेरे सहभागी रहे हैं।

सर्वप्रथम तो मैं परमेश्वर का ही धन्यवाद करता हूँ जिन्होने मुझे न सिर्फ इस किताब को लिखने की प्रेरणा दी बल्कि पूरे समय अपने पवित्र आत्मा के द्वारा अगुवाई दी और मेरा मार्गदर्शन किया जिससे मैं इसे लिख सका।

मैं उन सभी मसीही अगुवों का बहुत आभारी हूँ जिनसे मैंने मसीही जीवन की बहुत सी बातें सीखी हैं और आज इस योग्य बन पाया हूँ कि कुछ बातें निचोड़ के रूप में इस पुस्तक में लिख दूँ। मैंने बहन रश्मि, पास्टर पीटर कुरुविल्ला, मरियम आंटी, पास्टर डिकी लैन्स, साधना आंटी, पास्टर देवेन्द्र, संगीता दीदी, भाई राजकुमार, पास्टर अरनेस्ट विक्टर, पास्टर प्रभु, भाई शिष्य थॉमसन तथा अंकल ज़ैक पुनेन आदि अगुवों से बहुत कुछ सीखा है और मैंने आर. ए. टॉरे, डी. एल. मूडी (जीवनी), डेविड (पॉल) योंगी चो, वॉचमैन नी, बिली ग्राहम, रिक वॉरेन तथा ज़ैक पुनेन का साहित्य काफी पढ़ा है और मैं उनसे प्रभावित हूँ तथा इन सभी के लिये प्रभु का बड़ा धन्यवाद करता हूँ। इस पुस्तक में लिखी बहुत सी बातें ऐसे अनेक विद्वान लोगों के द्वारा मुझे दी गई शिक्षाओं तथा अनुभव का सार है।

मैं उन सभी भाइयों तथा बहनों का धन्यवाद करना चाहता हूँ जो मेरे इस प्रयास को सार्थक करने में प्रार्थनाओं में मेरे साथ रहे। अपने उन सभी मित्रों और सहायकों का भी मैं आभार व्यक्त करना चाहता हूँ जिन्होनें इस क़िताब की आरंभिक प्रतिलीपी को पढ़कर अपने विचार व्यक्त किए।

मेरी पत्नी प्रेरणा के लिये भी मैं प्रभु का धन्यवाद करता हूँ जिसके प्रेम तथा साथ के बिना शायद ही मैं अपनी इस किताब को पूरी कर पाता।

<u>प्रस्तावना</u>

बाँटें जीवन के मोती, हम
आओ ऐसा सुख बाँटें,
मिटे अंधेरा, जग हो उजाला,
मिल जुल हम जीवन बाँटें

जग में दुःख है, और समस्या,
जीवन पाप का जाल है,
पापमय हम इस संसार में,
प्रभु यीशु की खुशियाँ बाँटें

ऐसी पवित्रता मिले सबको,
जग में दुखियारा हो ना कोई,
जगत ज्योति परम ईश-पुत्र का,
मोक्षदान का सच बतलादें

ना तो कर्म से, ना ही धर्म से,
ना दान-पुण्य संस्कार से,
मिले मोक्ष हर उस मनुष्य को,
जो यीशु में विश्वास करे

पापों से हम मन फिरा लें
यीशु पर विश्वास करें
जीवन जल बपतिस्मा लें, और
नया जन्म आदान करें

पाप से मुक्ति, मन में शांति,
ईश्वर के वरदान हैं,
यीशु मसीह जो जीवन देते,
अनंतकाल तक मान्य है

"...जो कोई तुमसे तुम्हारी आशा के विषय में पूछे, उसे उत्तर देने के लिये सर्वदा तैयार रहो, पर नम्रता और भय के साथ..."

[1 पतरस 3:15]

हम सभी की बुलाहट है कि हम परमेश्वर को जाने। उसे चखने और जान लेने के बाद उसपर विश्वास कर आज्ञाकारिता का जीवन बितायें। प्रभु यीशु की बहुत सी आज्ञाओं में से एक बहुत महत्वपूर्ण आज्ञा है (मत्ती 28:18-20) कि हम परमेश्वर के राज्य का सुसमाचार जाति जाति और देश देश के लोगों तक पहुँचायें और उन्हें चेला बनायें और वो बातें मानना सिखाये जो हम मानते हैं।

बाँटें जीवन के मोती में मैंने यह बताने की कोशिश की है कि हम कैसे इस पवित्र बुलाहट में सहभागी हो सकते हैं। हमें किन बातों का ध्यान रखना चाहिये और कौन कौन सी ऐसी बातें हैं जिनका हम उपयोग न ही करें तो बेहतर है।

इस किताब की मुख्य विषयवस्तु उस धर्म विशेष के लोगों तक सुसमाचार पहुँचाने की है जिनमें से मैं भी आया हूँ। अपने अनुभव तथा परमेश्वर की प्रेरणा के अनुसार मैंने उन विषयों को छूने की कोशिश की है जिसके कारण बहुत बार हममें से कई भाई-बहिन तथा अनेक सुसमाचार प्रचारक इस मत से जुड़े लोगों में पैठ बनाने में असमर्थ रहते हैं या कई बार उनकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाकर उनसे दुश्मनी मोल ले बैठते हैं। अनजाने में वे न सिर्फ अपने लिये बल्कि आगे भी सुसमाचार प्रचार के सारे मार्ग में गड्डे खोद लेते हैं। बहुत बार जानकारी के अभाव में ऐसा हो जाता है। इस किताब में मैंने ऐसे कई पहलुओं को छुआ है जिससे सेवा-क्षैत्र में कार्य करने वाले सेवक लाभ उठा सकते हैं।

मेरा जन्म हिंदू परिवार में हुआ है, इसलिए मैं समझ सकता हूँ कि जब कोई मसीह का सुसमाचार थोपने की कोशिश करता है तो मन में कैसी कैसी भावनायें उठती हैं। मैं मूर्तिपूजक तो नहीं रहा पर अपने धर्म तथा अपनी संस्कृति से मुझे हमेशा से प्रेम रहा है। वे प्रचारक जो आत्मिक उद्धार के अलावा किसी भी दूसरे संदर्भ में बात करने लगते हैं (और खास तौर पर बिना उसकी पूरी जानकारी के) तो वे एक दीवार अपने और सुननेवाले के बीच खड़ी कर लेते हैं जिसे पार करना दुष्कर हो जाता है। मैंने ऐसे विषयों को भी छूने की चेष्ठा की है।

इस पुस्तक में कई जगहों पर मैंने प्रचलित हिंदी के ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिनका उपयोग आध्यात्मिक किताबों में किया जाता है। साधना, सत्संग, सतगुरू, ईश्वर, आस्था, जन्मोत्सव आदि ऐसे ही कुछ शब्द हैं। शुरू में आपको ये थोड़े अटपटे लग सकते हैं पर उनको समझ लेने से आपको एक रास्ता मिलेगा जिसका इस्तेमाल कर आप उनके बीच में जगह बना सकेंगे।

यदि आप हिंदू समाज से जुड़े लोगों के बीच में प्रभु यीशु के प्रेम की खुशखबरी बाँटते हैं, या बाँटने की इच्छा रखते हैं तो मेरी परमेश्वर से प्रार्थना है कि इस किताब के पढ़ने पर आपको वो बातें सीखने को मिलें जो परमेश्वर आपकी सेवा को फलवंत करने कि लिये आपको सिखाना चाहता है।

यदि आप हिंदू परिवार से मसीही विश्वास में आये विश्वासी हैं और अपने परिवार, दोस्तों तथा रिश्तेदारों की चिंता करते हैं कि किस प्रकार किन बातों का ध्यान रखते हुए कैसे आप उन तक यह सुसमाचार पहुँचायें, तो आपके लिये भी मेरी प्रार्थना है कि प्रभु आपको भी ध्यान रखने योग्य मुख्य बातें सिखायें और आपके परिचितों के बीच में आपके गवाही सुनाने को आशीषित करें ताकि बहुत सी आत्मायें नाश होने से बच जायें।

विषय-सूची

परिचय **13**

पृष्ठभूमि 14

सच्चा सुसमाचार क्या है **23**

सुसमाचार क्या है....................24

सुसमाचार प्रचार का भारतीयकरण **29**

भारतीयकरण की आवश्यकता....................30

सुसमाचार प्रचार का भारतीयकरण....................33

यीशु मसीह तथा बाइबल का हिंदूकरण....................37

विरोध क्यों होता है **41**

हिंदू धर्म क्या है?....................41

हिंदू धर्म में आचरण....................44

विरोध क्यों होता है?....................51

इस विषय में क्या प्रार्थना करें....................58

गवाही और सुसमाचार प्रचार सेवा **63**

गवाही तथा सुसमाचार प्रचार....................63

गवाही तथा सुसमाचार – कुछ गहराई की बातें....................67

बात कैसे शुरू करें....................73

व्यक्तिगत गवाही द्वारा सेवा....................76

मेरी व्यक्तिगत गवाही **81**

गवाहियाँ....................86

क्या आप तैयार हैं **99**

सच्चा सेवक कौन है....................100

निष्कर्ष **105**

ध्यान रखने योग्य दस मुख्य बातें....................106

1
परिचय

संसार की पूरी जनसंख्या के छठे भाग को शरण देने वाला हमारा देश, भारत विविधताओं से भरा हुआ देश है। चाहे आप प्राकृतिक सौन्दर्य की ओर देखें, रहन-सहन, खान-पान, भाषा, संस्कृति, रंग-रूप या कुछ ओर, हर चीज में विविधता होते हुए भी एकता है। अनेक जातियों और धर्मों की जन्मभूमी यह देश धार्मिक भाईचारे की एक मिसाल रहा है। मेरे ख्याल में पूरे विश्व में कोई ऐसा देश नहीं होगा जिसकी अपने आप की एक धरोहर हो, एक इतिहास। - इतनी विविधताओं के बीच ऐसी एकता।

क्या मैं एक ख्याली तस्वीर बना रहा हूँ?

इस ही देश में तो जातिगत छूआछूत, दहेज, कन्या-भ्रूण हत्या, भ्रस्टाचार तथा अमीर-गरीब में भेदभाव जैसे दानव भी विकराल रूप धारण किये इंसानियत को ही चकनाचूर कर रहे हैं।

हाँ, ये दोनों ही तस्वीरे हमारे भारत देश की ही हैं। अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी तथा अंधविश्वास ने बहुत से ऐसे पापों को इस देश में जन्म दिया

है जो लोगों को ईश्वर से तो दूर कर ही रहे हैं उनको सर्वनाश की ओर भी धकेल रहे हैं।

परंतु फिर भी, इस बात में कोई संदेह नहीं है कि भारत में एक बात तो है – यहाँ धर्म सतही नहीं है जो किनारों पर रहे, धर्म यहाँ कि नस नस में है। कोई प्रकृति को मानता है, तो कोई देवी-देवताओं को; कोई मूर्ति-पूजा करता है तो कोई साधना। कोई अमृतवाणी सुनता है तो कोई सत्संग। कोई अद्वेत को मानता है तो कोई कहता है कि कण कण में ईश्वर का वास है। धर्म यहाँ कि संस्कृति के साथ इतना अंदर तक जुड़ गया है कि काम में धर्म है, नाम में धर्म है, रीतिरिवाजों में धर्म है, जन्म और मरण में धर्म है, नहाने धोने में धर्म है, खाने और खिलाने में भी धर्म है। देखा जाये तो धर्म यहाँ जीवन जीने का एक तरीका है।

प्रभु यीशु मसीह का परमेश्वर के प्रेम का, मानवजाति को पाप-क्षमा का और मोक्ष पाकर स्वर्ग राज्य में सदैव रहने का एकैश्वरीय (एक ही ईश्वर को मानने वाले) सुसमाचार शुरू से लेकर अब तक इस बहुईश्वरीय (बहुत से ईश्वरों और देवी-देवताओं को मानने वाले) देश में जगह बनाने के लिये जूझता रहा है। जब तक हम यहाँ कि संस्कृति को ना जाने और धर्म तथा संस्कृति के बीच के बहुत बारीक अंतर को ना पहचाने, सुसमाचार कार्य को आगे बढ़ा पाना मुश्किल है और सही मायनो में अपने हिंदू भाईयों और बहनों को परमेश्वर के प्रेम के बारे में बता पाना कठिन है।

पृष्ठभूमि

विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र, हमारे देश भारत की जनसंख्या 100 करोड़ से ऊपर है और जनसंख्या की दृष्टि से यह विश्व का दूसरा सबसे बड़ा देश है। जिस रफ्तार से यहाँ कि जनसंख्या बढ़ रही है, माना जा रहा है कि सन् 2015 तक भारत संसार का सबसे ज्यादा जनसंख्या वाला देश हो जायेगा।

यह धर्म तथा कर्म की जमीन है। विश्व के करीब करीब सभी मुख्य धर्मों का तथा उनकी शिक्षाओं का यहाँ आदर किया जाता है। यहाँ एक ओर एक-ईश्वर

को मानने वाले मुस्लिमों तथा ईसाईयों का देश है, ईश्वर को ना मानकर निर्वाण को ही लक्ष्य मानने वालों का देश है तो यह 33 करोड़ देवी-देवताओं को मानने वालों का भी देश है। यह वो जगह है जहाँ 'कण कण में भगवान' माना जाता है, 'सबका मालिक एक है' का संदेश दिया जाता है और 'सभी मार्ग एक ही हैं' की शिक्षा दी जाती है। आध्यात्म की बहुत पुरानी धरोहर रखने वाले इस देश में ईश्वर की भक्ति के अलग अलग मार्गों की अनेक धारायें अनवरत बहती हैं जो दूर दूर तक (सात समुंदर पार भी) अपनी छाप छोड़ने लगी है।

करीब 220 मुख्य बोलियों वाला यह देश ईश्वर को अलग अलग नामों तथा स्वरूपों में देखने का तथा उसमें श्रद्धा रखने का आदी है। ज्यादातर लोग कम पढ़े लिखे और गरीब हैं और रोटी, कपड़ा और मकान की जुगत में ही जिन्दगी काट देते हैं। पाप-क्षमा तथा मोक्ष-प्राप्ति जैसे ऊँचे मसले उनके जीवन की पहुँच से बाहर की चीज हैं, परंतु ईश्वर में सभी लोग श्रद्धा रखते हैं और प्रेम तथा भक्ति के साथ दिये गये सत्संग का आदर करते हैं।

भारत उन देशों में से एक है जिसका उल्लेख परमेश्वर के वचन में भी मिलता है (एस्थेर 1:1)। परंतु दुःख की बात यह है कि परमेश्वर का वचन अभी इस देश में नहीं रच पाया है।

मेरा अभिप्राय यह कतई भी नहीं है कि 'येन केन प्रकारेण' (किसी भी प्रकार) इस देश के सभी लोगों को ईसाई बना दिया जाये। नहीं, कतई भी नहीं। बाइबल साफ साफ कहती है कि बुलाये हुए तो बहुत हैं परंतु चुने हुए बहुत थोड़े। हमारा काम धर्म-परिवर्तन नहीं है। हालांकि इतिहास में बहुत बार ऐसा सुना गया है कि साम, दाम, दण्ड, भेद नीति के द्वारा ऐसे प्रयास किये गये हैं, परंतु न तो यह इस पुस्तक का विषय है और न ही यीशु मसीह की शिक्षा।

हमारा काम है, 100 करोड़ से ऊपर की आबादी वाले इस देश में, परमेश्वर के महान प्रेम के बारे में बताना। जो विश्वास करेगा वो उद्धार पायेगा। घोड़े को पानी तक लाना ही हमारा काम है, पानी पीना या ना पीना उसकी मर्जी। हम किसी भी व्यक्ति को वो चीज जो हमें दिख रही है, दिखाने का प्रयास

उसकी ओर ईशारा करके कर सकते हैं, परंतु वो उसे ठीक-ठीक देख सके, और उसे वास्तविक रूप में वैसा ही देखे जैसा हम देख रहे हैं, उसके लिये यह ज़रूरी है कि हमारे बताने के बाद वो स्वयं भी उस वस्तु को देखना का इच्छुक बने और समझने का प्रयास करे। हम किसी पर अपनी कोई बात या दृष्टिकोण थोप नहीं सकते, पर हाँ, जब मौका मिले तो उसे सही प्रकार से समझाने (जिस तरीके से वो समझ सकता है) और ठीक-ठीक दिखाने का प्रयास तो हमें ज़रूर करना पड़ता है।

परंतु हमें यह समझने कि आवश्यकता है कि हिंदू व्यक्ति की समझ और सोच में आपकी सोच कि तुलना में बड़ा अंतर है। सुसमाचार की बातें आपको लगता हैं कि आप सरल शब्दों में समझा रहे हैं और सामने वाला व्यक्ति ज़रूर समझ रहा होगा, यह एक भारी भूल भी हो सकती है। एक ही शब्द की आपकी और एक हिंदू व्यक्ति की समझ में बड़ा अंतर हो सकता है। उद्धार अथवा मोक्ष की आपकी समझ और हिंदू व्यक्ति की समझ अलग है, आप जहाँ इसे पापों से मुक्ति तथा अनंत जीवन के रूप में देखते हैं, एक हिंदू के लिये इसका अर्थ जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा है।

ईश्वर को देखने का और उसकी भक्ति करने का उसका तरीका भी आपसे अलग है, जहाँ आप एक ही ईश्वर को मानते हैं, एक हिंदू व्यक्ति के लिये कण कण में भगवान है (बल्कि उसका मानना होता है कि भगवान उसके अंदर ही है जिसकी खोज साधना के द्वारा करनी है), वह एक या बहुत से देवी-देवताओं को मानने वाला होता है, और किसी दूसरे को भी अपनाने तथा आदर करने में देर नहीं करता। जहाँ आपके लिये बाइबल एकमात्र धर्मपुस्तक है जो ईश्वर से संबंधित सभी प्रश्नों तथा बातों का संपूर्ण जवाब है, हिंदू धर्म की कोई एक विचारधारा नहीं है, वह एक खुले मैदान की तरह है जिसमें आप जिस भी दिशा में जितना भी दौड़ सकें वो ही आपका कर्म है और उसी आधार पर आपका अगला जन्म निर्धारित हो जायेगा।

आप जहाँ एक जन्म, मृत्यु, न्याय (दंड - नर्क अथवा आशीष - स्वर्ग) में विश्वास करते हैं, एक हिंदू व्यक्ति कर्मों के आधार पर 84 लाख योनियों में अर्थात जन्म के बाद जन्म लेने में विश्वास करता हैं। जहाँ हमारे लिये प्रभु यीशु हमारे मसीही विश्वास के प्रवर्तक (शुरू करने वाले) हैं, हिंदू धर्म का

अपने आप में कोई एक प्रवर्तक नहीं है। हिंदू लोग बहुत से धार्मिक कार्यकलाप और संस्कार करते हैं पर उनका उद्भव (शुरूआत) कहाँ से हुई, यह नहीं समझते। हम जितना परमेश्वर के वचन को महत्व देते हैं उतना ही वे कर्म को प्रधानता देते हैं, और संभव है कि बहुत से लोग आपको ऐसे मिलें जिन्होंने कभी कोई धर्मशास्त्र नहीं पढ़ा।

हिंदू धर्म में लोग अपने जन्म के आधार पर जातियों में बँटे हुए हैं और हरेक जाति के अपने संस्कार, देवी-देवता तथा मान्यतायें होती हैं। ज्यादातर हिंदू लोग ईश्वर को अनेक रूप में देखने के आदी हैं, और क्योंकि बहुत से देवी-देवताओं का स्वभाव उग्र भी होता है, इसलिये वे उनसे डरते भी हैं, और इसीलिये प्रभु यीशु को सबके साथ मानने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं होती, वे यीशु का चित्र बाकि देवताओं के साथ लगाकर उसकी पूजा कर सकते हैं, परंतु सब कुछ छोड़कर सिर्फ यीशु मसीह के पीछे चलना उनको बड़ी भयंकर बात लगती है। उन्हें लगता है कि इससे उनके स्थानीय अथवा कुल के देवता या कोई और भगवान नाराज़ हो गये तो क्या होगा, और इसलिये वे आसानी से मसीह को उद्धारकर्ता ग्रहण नहीं कर पाते। इन्हीं सब बातों के कारण आपको सुसमाचार बाँटते वक्त सुनने वाले की मनोस्थिति को समझना बहुत ज़रूरी है।

एक बात और जो प्रभु ने प्रकाशन के रूप में हमें लैव्यव्यवस्था तथा गिनती की पुस्तक में से सिखाई है वह यह है कि बहुत से संस्कार तथा रीतिरिवाज जो आज हिंदू धर्म में प्रचलित हैं उनकी शुरूआत कैसे हुई और क्यों उनका पालन किया जाना चाहिये यह बहुत से हिन्दुओं को नहीं मालूम परंतु असल में बाइबल के पुराने नियमों से हमें उनकी पूरी जानकारी मिलती है। जैसे पूजा करते समय घंटी का बजाना, आरती तथा धूप करना, तिलक करना, पानी में डुबकी लगाना, मुंडन कराना, पशु-बलि, पुरोहित को भेंट आदि ऐसे काम हैं जिनको बहुत लोग <u>करते तो हैं पर समझते नहीं कि क्यों करते हैं</u> जबकि हमें बाइबल के पुराने नियम में उनका पूरा विवरण मिलता है। भारत के पश्चिम तथा मध्य-पूर्व के वासी 'आर्य' जो कि पुराने नियम की कई बातों को जानते थे, भारत में आये और अपने पूजा-अर्चना के तरीके भी सिखाये।

जी हाँ, भारत के असली देशवासी द्रविड़ जाति के लोग जो गहरे वर्ण के होते थे जिनपर 2500 ईसा पूर्व गौरवर्ण के आर्यों (ईरान अथवा अन्य पश्चिमी देशों से आये विदेशी आक्रमणकारी) ने आक्रमण किया और उन्हें परास्त कर दक्षिण की तरफ धकेल दिया। इतिहास के विद्वान मानते हैं कि हड़प्पा संस्कृति (2600 – 1700 ईसापूर्व) भारत के द्रविड़ों द्वारा स्थापित की गई थी जो कि सिंधू घाटी के आसपास का क्षैत्र था जिसे सिंधु घाटी सभ्यता भी कहा जाता है। इसका मुख्य क्षैत्र भारत के गुजरात व राजस्थान तथा पाकिस्तान के सिंध पंजाब व बलूचिस्तान में माना गया है, पर इसके बहुत से अवशेष अफगानिस्तान तथा तुर्कमेनिस्तान तक भी मिले हैं। मेसोपोटामिया सभ्यता (5000 – 700 ईसापूर्व) में राजा उर, अश्शूर जाति, हित्ती तथा मिश्री लोगों का ज़िक्र मिलता है जो कि बाइबल में भी लिखे हैं। यह बात इस बात को समझने के लिये काफी है कि ईरान तथा पश्चिम से आये ये आर्य लोग ईश्वर की उपासना के अपने तरीके लेकर भारत प्रदेश में आये। द्रविड (जिन्हें बाद में दस्यु भी कहा गया) स्थानीय लोग थे जो प्रकृति तथा मूर्तियों की उपासना करते थे उनको आर्यों ने ईश्वर उपासना के अपने तरीके सिखाये जो संभवतः यहोवा परमेश्वर के बताये हुये कई नियमों को जानते थे और मानते थे।

कुछ दिन पहले एक भाई को ईरानी भाषा बोलते देख मुझे बहुत आश्चर्य हुआ क्योंकि मुझे करीब करीब सारी बात समझ में आ रही थी, हालांकि कुछ शब्द एकदम अलग थे, फिर भी मैं समझ पा रहा था। मुझे इस वाकये से यह बात समझने में देर नहीं लगी की आर्यों का आगमन एक कपोलकल्पित बात नहीं है। मुझे इससे यह बात भी समझ में आ गई कि क्यों दक्षिण भारत की भाषाओं (द्रविड़ भाषायें - तमिल, कन्नड़, तेलुगु, तुलु तथा मळयालम) की तुलना में हिंदी भाषा ईरानी से ज्यादा मिलती जुलती है।

इन सब बातों की पूरी जानकारी रखकर जब आप बात करेंगे तो आपके हिंदू मित्र आपके ज्ञान से भी प्रभावित होंगे और संभवतः और जानने में रूचि लें। हिंदू धर्म के मानने वाले जहाँ ज्ञान को बहुत प्रधानता देते हैं, बाइबल सिखाती है कि परमेश्वर का भय मानना आत्मिक बुद्धी, ज्ञान तथा समझ की शुरूआत है (नीतिवचन 1:7, 9:10, भजनसंहिता 111:10) और परमेश्वर हम

जैसे साधारण लोगों से जगत के असाधारण विद्वानों को भी शर्मिंदा करा सकता है।

एक और समझने वाली बात यह है कि हमारी नज़र आँकड़ों पर नहीं होनी चाहिये। परमेश्वर को भीड़ नहीं, आत्मा और सच्चाई से उसकी आराधना करने वाले सच्चे भक्त चाहिये। सच्चे चेले जो अपने गुरू का पूरा पूरा अनुसरण करते हों और ईश्वर की मर्ज़ी पर ही चलना चाहते हों।

भारतवर्ष में प्रभु यीशु मसीह का सुसमाचार पहुँचाने में एक नहीं बहुत सी रुकावटे हैं जिन्हें पहचान कर उनका निवारण कर आगे बढ़ना ज़रूरी है। उनमें विराट जनसंख्या, विविध संस्कृतियाँ, विशाल क्षैत्रफल (देश की लम्बाई और चौड़ाई), अनेक भाषायें, बहुईश्वरवाद, ईश्वर को पाने के अन्यान्य तरीके शामिल हैं। सरकारी आँकड़ों के हिसाब से भारत की कुल जनसंख्या का सिर्फ 2.3 प्रतिशत भाग ही ईसाई है। यह आँकड़ा न तो हमें दुःखी करना चाहिये और न खुश – क्योंकि उनमें से कितने प्रभु को व्यक्तिगत रूप में कितने लोग जानते हैं यह हमें नहीं पता। और न ही हमें यह पता है कि इन आँकड़ों के अलावा अन्य धर्मों में ऐसे कितने लोग हैं जिन्होने धर्मांतरण तो नहीं किया पर प्रभु यीशु में विश्वास करते हैं और परमेश्वर के प्रेम में भक्ति का जीवन बिताते हैं।

सन 2007 के बीच का एक आँकड़ा मैं यहाँ देना चाहता हूँ जो कि जॉनसन तथा तीसज़ेन (Johnson and Tieszen)* द्वारा अक्तूबर 2007 में एक शोध के अंतर्गत इकट्ठा किया गया है। यह अन्य विश्वासियों के किसी भी मसीही (अथवा ईसाई) व्यक्ति के सम्पर्क में होने का प्रतिशत को प्रदर्शित करता है।

धर्म अथवा श्रेणी के लोग जो किसी मसीही (ईसाई) व्यक्ति को व्यक्तिगत रूप से जानते हों	एशिया में	पूरी दुनिया
बौद्ध लोग	13.7%	14.1%
हिंदू लोग	13.9%	14.1%
मुस्लिम लोग	10.4%	13.3%
अधार्मिक लोग	14.7%	31.6%
प्रकृति अथवा अन्य देसी धर्म को मानने वाले	15.8%	30.3%

* http://www.lausanneworldpulse.com/research.php/856 (For full article, including research methodology, see *Evangelical Missions Quarterly*, October 2007, 494-502.)

इन आँकड़ों से एक बात तो समझ में आती है कि दुनिया में कितने ही ऐसे भी लोग हैं जो व्यक्तिगत तौर पर किसी भी ईसाई या मसीही व्यक्ति को जानते ही नहीं हैं तो फिर मसीह के बारे में तो वो कैसी ही सुनेंगे। कैनेड़ा के प्रचारक औसवाल्ड जे स्मिथ का कहना है कि हम मसीह के दूसरे आगमन की बात करते हैं जबकि आधी दुनिया से ज्यादा लोग अभी प्रभु यीशु के प्रथम आगमन से भी अंजान है।

हरेक मसीही व्यक्ति को इस बात को समझना चाहिये कि वो सिर्फ मसीही लोगों से ही मित्रता ना करें बल्कि हिंदू लोगों को भी अपना मित्र बनायें और फिर धीरे धीरे उनसे ईश्वर के बारे में बात करें। यूँ तो परमेश्वर स्वपनों, दर्शनों तथा अन्य सुसमाचार प्रचार के साधनों से लोगों तक सुसमाचार पहुँचाता है, परंतु हर सदी में इंसान से इंसान तक इसके पहुँचने की तादाद ही ज्यादा रही है, इसलिये हमें तो अपनी जिम्मेदारी समझनी ही होगी, ताकि मसीह का राज्य शीघ्र आ सके।

हमारे देश का लगभग 80 प्रतिशत भाग हिंदू है जिनको परमेश्वर तक पहुँचने का मार्ग बताने का प्रयास आप कर रहे हैं। इतनी बड़ी संख्या से भी हतोत्साहित होने की कोई बात नहीं है। इसमें बहुत से ऐसे लोग हैं जो अब मसीह को व्यक्तिगत तौर पर जानते हैं और उसका अनुसरण करते हैं। यही आपका उद्देश्य है कि लोग सच्चे ईश्वर को पहचाने और उसकी कृपा से पाप-क्षमा तथा मोक्ष (उद्धार) प्राप्त करें।

यह पृष्ठभूमि अपने आप में इस बात को समझाने के लिये काफी है कि हमारा लक्ष्य किन तक पहुँचना है। एक ऐसा देश जिसकी अपनी एक संस्कृति है, अपना एक इतिहास है और जो आज भी जीवन के हर क्षैत्र में नित नया इतिहास लिख रहा है। इसमें भी ऐसे लोग जो ईश्वर को हर रूप में, हर रंग में, हर भाषा में देखने के लिये तैयार हैं, और अपने सभी ईश्वरों के साथ प्रभु यीशु का भी स्वागत करने को तैयार हैं। मैं जानता हूँ कि यह हमारा उद्देश्य नहीं है, पर मैं मानता हूँ कि हमें सिर्फ सत्य का ज्ञान कराना है, फिर सत्य स्वतः ही उन्हें अन्य बंधनों से मुक्त करेगा (यूहन्ना 8:32)।

उन तक पहुँचने के लिये उनके तौरतरीकों और रीतिरिवाजों को जानना (मानना नहीं) ज़रूरी है। ऐसे तरीको का इस्तेमाल करके जिससे आप उन्हें नाराज न करें बल्कि उनकी भावनाओं का आदर करते हुए देशी लिबास में जब आप सुसमाचार को पहुँचायेंगे तो वह ज़रूर ग्रहण होगा। ध्यान रखें कि हिंदू धर्म तथा उसकी शिक्षायें बहुत विविध हैं – हरेक हिंदू मूर्तिपूजक नहीं होता, कोई ईश्वर को मूर्त रूप में पूजता है तो कोई अमूर्त की साधना करता है। उसके विचारों तथा विचारधारा का ध्यान रखते हुए ही आपको सुसमाचार सुनाना होगा। दूसरा यह कि अन्य धर्मों की अपेक्षा हिंदू धर्म काफी लचीला और सतत विकाशशील है, इसलिये नये नये धर्मगुरू नये विचार प्रतिपादित करते हैं और यह बढ़ता जाता है, इसलिये इसमें रूढ़ीवादी बातों से लेकर आधुनिक आध्यात्मिकता सब कुछ पाया जाता है, इसका ध्यान भी हमें रखना ज़रूरी है।

बाइबल हमको सिखाती है कि पौलुस ने सही तरीका इस्तेमाल किया -

"क्योंकि सब से स्वतंत्र होने पर भी मैं ने अपने आप को सब का दास बना दिया है कि अधिक लोगों को खींच लाऊँ। मैं यहूदियों के लिये यहूदी बना कि यहूदियों को खींच लाऊँ। जो लोग व्यवस्था के अधीन हैं उनके लिये मैं व्यवस्था के अधीन न होने पर भी व्यवस्था के अधीन बना कि उन्हें जो व्यवस्था के अधीन हैं, खींच लाऊँ। व्यवस्थाहीनों के लिये मैं जो परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन हूँ, व्यवस्थाहीन सा बना कि व्यवस्थाहीनों को खींच लाऊँ। मैं निर्बलों के लिये निर्बल सा बना कि निर्बलों को खींच लाऊँ। मैं सब मनुष्यों के लिये सब कुछ बना कि किसी न किसी रीति से कई एक का उद्धार कराऊँ।"

[1 कुरिन्थियों 9:19-22]

यदि हमारा आधार बाइबल है तो हमारा मार्ग तो तय है। हमें बस विश्वास के साथ कदम बढ़ाने की आवश्यकता है।

2

सच्चा सुसमाचार क्या है

पहली बात तो यह शब्द 'सुसमाचार' ही बहुतों के पल्ले नहीं पड़ता। ऐसा नहीं है कि यह शब्द गलत है या सुनाने वाले की मंशा गलत है। पर उसे सुनने वाले के स्तर पर जाकर समझाना ही सही सुसमाचार है। आप इसे खुशखबरी कह सकते हैं, शुभ-संदेश कह सकते हैं, ईश्वर के प्रेम का समाचार कह सकते हैं, मोक्ष का मार्ग कह सकते हैं, कहने का मतलब यह है कि सामने वाले की मनोस्थिति को समझकर और उसके स्तर पर जाकर सुनाया गया सुसमाचार ही फलवंत होता है।

सिर्फ किसी को सुना देना भर काफी नहीं है, जैसा हम में से कई लोग करते हैं बल्कि उसके समझ में आने तक उसे अन्यान्य तरीकों से बताते रहना ज़रूरी है। दूसरे यह बात ऐसी भाषा तथा शब्दों में बताई जानी चाहिये जो उसे समझ में आये। एक चीनी व्यक्ति को हिंदी में सुनाया गया सुसमाचार

जैसे बेकार है, ठीक उसी प्रकार एक हिंदू व्यक्ति को उसकी समझ में आने वाले शब्दों के बिना सुनाया गया सुसमाचार कई बार बेकार चला जाता है।

दूसरी बात ये कि मैंने "सच्चा सुसमाचार" क्यों लिखा है? क्या कोई झूठा सुसमाचार भी होता है?

सुसमाचार क्या है

पापी मनुष्यों के लिये परमेश्वर के प्रेम का समाचार, जिसमें हम पापमय वस्तुस्थिति को समझाते हैं, पाप-क्षमा के लिये पश्चाताप की आवश्यकता तथा ईश्वर की कृपा का वर्णन करते हैं और मानवजाति के मोक्ष (उद्धार) के लिये (और उनके पापों की कीमत चुकाने के लिये) ईश्वर की अपने पुत्र के मानव रूप में भेजने की, उसके बलिदान, मृत्यु तथा पुनर्त्थान की योजना का खुलासा अपने सामने बैठे अविश्वासी भाई या बहन से करते हैं, यही सच्चा सुसमाचार है।

"इसी कारण मैं ने सब से पहले तुम्हें वही बात पहुँचा दी, जो मुझे पहुँची थी कि पवित्रशास्त्र के वचन के अनुसार यीशु मसीह हमारे पापों के लिये मर गया और गाड़ा गया, और पवित्रशास्त्र (भविष्यवाणियों) के अनुसार तीसरे दिन जी भी उठा और कैफा को तब बारहों को दिखाई दिया। फिर वह पाँच सौ से अधिक भाइयों को एक साथ दिखाई दिया..."

[1 कुरिन्थियों 15:3-8]

अब आप इसको कैसे करते हैं, यह आप पर निर्भर करता है। उद्धार के सच्चे सुसमाचार में से किसी भी भाग को निकाल देना एक समझौता है जो कि उसे अधूरा बना देता है।

ऐसी खुशखबरी के अलावा और किसी भी तरह की खुशखबरी, जैसे बीमारियों से छुटकारा, जीवन की मुश्किल परिस्थितियों का खत्म हो जाना, नौकरी मिल जाना, आशीषें मिलना, सुख-शांति मिलना, ईश्वर से धन-संपदा पाना इत्यादी सब अधूरी खुशखबरी है, और यदि अंत तक पाप-क्षमा तथा अनंत जीवन के समाचार से पूरी न की जाये तो झूठी खुशखबरी ठहरती है।

आजकल बहुत से लोग सिर्फ यह प्रचार करते हैं कि प्रभु *यीशु में बस विश्वास कर लेना काफी है* (आप पश्चाताप करें या न करें, प्रभु यीशु की आधीनता में चलें या न चलें), यह भी गलत है। शैतान तथा उसकी दुष्ट आत्माएं भी जानते हैं कि परमेश्वर एक ही है (याकुब 2:19) और यह कि यीशु मसीह मृतकों में से जी उठने वाला जीवित ईश्वर है, वे उसके नाम से काँपते भी हैं, परंतु उनमें और एक विश्वासी चेले में फिर क्या अंतर है, यही की विश्वासी चेला अपने पापों से पश्चाताप कर यीशु को अपना प्रभु (सतगुरू) जानकर उसकी आज्ञाकारिता में जीवन बिताने का निर्णय लेता है जबकि शैतान और उसकी आत्मायें हमेशा परमेश्वर के विरोध में बने रहते हैं। सिर्फ बुद्दी से यीशु को जीवित ईश्वर मान लेना ऐसा है जैसे किसी लड़की को कोई लड़का पसंद आ जाये और वो उससे शादी किये बिना ही उसे अपना पति मानने लगे। क्या सिर्फ उसके मान लेने भर से ऐसा हो जायेगा, नहीं। उसके लिये उसे सबके सामने अंगीकार करना होता है और अपने निर्णय से उसके साथ शादी का संबंध बनाना होता है ताकि वो कानूनन उसकी पत्नि कहलाये। कई लोग कह देते हैं कि ईश्वर प्रेम है, यह अधूरा सुसमाचार है और जब तक पूरा न हो जाये, असत्य यानि झूठा सुसमाचार कहलाता है।

प्रभु यीशु ने हरेक आश्चर्यकर्म के बाद यही कहा कि किसी को न बताना। ताकि लोग ऐसा न समझ लें कि बस वो दुष्टात्मा निकालने वाला जादूगर है, या बीमारियों से ठीक करने वाला कोई वैद्य, या फिर मार्ग दिखाने वाला कोई गुरू। प्रभु यीशु ने अपने चेलों से पूछा कि लोग मुझे क्या कहते हैं, तो किसी ने कहा, भविष्यवक्ता, कोई बोला युहन्ना या एलियाह। परंतु प्रभु ने फिर पूछा कि तुम मुझे क्या समझते हो और पतरस के यह कहने पर कि आप परमेश्वर के पुत्र मसीह (छुड़ानेवाला) हैं, तब प्रभु ने कहा कि यह उसपर परमेश्वर के द्वारा प्रकाशित किया गया और यही सत्य है, बाकि सब झूठ। हमें बीमारियों से छुटकारा दिलाने वाले, और नौकरी दिलाने वाले और धन-संपदा देने वाले यीशु का सुसमाचार नहीं बताना है, बल्कि पापों से क्षमा दिलाने वाले ईश-पुत्र यीशु का सुसमाचार बताना है जो मरकर जीवित हो गया और आज स्वर्ग राज्य में सिंहासन पर बैठा है ताकि आने वाले समय में मृतकों का और जीवितों का न्याय करे।

मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि व्यक्ति को प्रभु यीशु को जान लेने के बाद अन्य दुनियावी ज़रूरतें/आशीषें नहीं मिल सकती हैं, बल्कि यह बताने की कोशिश कर रहा हूँ कि इन बातों के लिये कोई प्रभु यीशु पर विश्वास करे परंतु पाप की समस्या को ना समझे, ना उनसे तौबा (पश्चाताप) करे और न ही उनसे क्षमा मांगे, तो उसका उद्धार नहीं हो सकता और अन्ततः हम उसे ईश्वर की संतान बनाने के बजाय "नर्क की दुगनी संतान" (मत्ती 23:15) बना डालेंगे। इसलिये हमें सतर्क रहने की ज़रूरत है कि हम क्या सुसमाचार सुना रहे हैं।

हमें पापों से पश्चाताप, परमेश्वर के प्रेम, प्रभु यीशु के इंसान रूप में आने का प्रयोजन, उनकी शिक्षायें, उनकी मृत्यु, उनका फिर जी उठने और जीवित स्वर्ग में उठा लिया जाने की खुशखबरी लोगों को सुनानी है। अब उनका लहू हमें हमारे अधर्मों को धोकर साफ करता है और हमें पाप क्षमा तथा मोक्ष देता है, यह बात स्पष्ट तौर पर बताने की ज़रूरत है। कई बार हम यह बताना भूल जाते हैं कि परमेश्वर कितना पवित्र तथा प्रेमी है, और कई बार यह कि वो एक न्यायी परमेश्वर भी है। वह पाप लेकर किसी को स्वर्ग में आने की इज़ाजत नहीं देगा और जो उसके दिये हुए पापक्षमा के एकमात्र रास्ते को ठुकरा देते हैं, उनका वो भी तिरस्कार कर देगा।

परमेश्वर ने सभी को विवेक दिया है जो उनको चेताता रहता है कि उन्होंने अपने जीवन में पाप किये हैं। जैसे ही आप पाप के विषय में बात करेंगे, आपके सामने बैठा व्यक्ति समझ जायेगा। लेकिन बिना पवित्र आत्मा के कोई यह नहीं कह सकता कि यीशु मसीह ही प्रभु है, इसलिये अलग अलग लोग अलग अलग तरीकों से इस बात का खंडन करने की कोशिश करते हैं।

इस सुसमाचार को आप कैसे उन तक पहुँचाये, यह ही एक महत्वपूर्ण मसला है। सामने वाले व्यक्ति की सोच को समझे बिना, उसके धरातल पर पैर रखे बिना "मसीही शब्दों" में सुनाया गया सुसमाचार बहुत से लोगों के अंदर तक नहीं पहुँच पाता है। मैं यहाँ ऐसे लोगों की बात नहीं कर रहा हूँ जो दुःख से, परिस्थितियों से टूटे हुए थे, और ढूंढते हुए मसीह के नज़दीक आ गये और प्रार्थनाओं के उत्तर होते देख तुरंत विश्वास करने लगे, ऐसे लोगों को बचाने के लिये तो प्रभु का धन्यवाद हो, परंतु मैं आम लोगों के बारे में

बात कर रहा हूँ, जो अपने रोजाना का जीवन जी रहे हैं। मामूली परेशानियाँ तो उनके जीवन में भी होंगी पर वो बदहवास होकर कहीं कोई हल नहीं ढूंढ रहे हैं – जैसे आपका दूधवाला, परचूनी की दुकानवाला, अखबार बाँटनेवाला, टैक्सी/बस/ऑटो ड्राइवर, आपके साथ बस-स्टेंड पर खड़े लोग, खेत में काम करते किसान, ईमारत बनाते मज़दूर, ऑफिस में आपके साथ करने वाले लोग, आपके मैनेजर या अफसर, हॉटल तथा रेस्त्रां का स्टाफ जहाँ आप जाते हैं, पेट्रॉल पंप वाला, सब्जीवाला तथा अन्य ऐसे लोग। अपने चारों ओर नज़र दौड़ाइये और देखिये कितने ही लोग आपके दिखेंगे जो अपनी परेशानी लेकर आपके पास नहीं आयेंगे, आप को उनके पास जाना होगा।

मैं समझता हूँ कि प्रभु यीशु ने इसका एक अच्छा उदाहरण हमको दिया है। दृष्टांतों का उपयोग सुसमाचार सुनाने का ज्यादा कारगर तरीका है, बजाय इसके, कि हम सामने वाले के कर्म-काण्डों, तौर-तरीकों, संस्कारों, ईश्वर के बारे में उसकी समझ का विष्लेषण करें और फिर बाइबल के सिद्धान्त समझायें। प्रभु यीशु मसीह ज्यादातर रोजाना की परिस्थितियों में से दृष्टांत उठाकर लोगों को स्वर्ग के राज्य के बारे में बताया करते थे। मजदूर, बीज बोने वाला, राई, पेड़, पहाड़, भेड़, दुल्हन, दीया ये सारे शब्द बहुत सरलता के साथ आम आदमी को परमेश्वर के राज्य के बारे में बताते थे जिनको धर्म की तथा पुराने नियम की बहुत जानकारी नहीं थी।

मेले में भटक गये एक बच्चे की अपने पिता से मिलने की कहानी जिसमें बच्चा अपनी सीमित बुद्धी के कारण उसको ढूंढ नहीं सकता, हमारी स्थिति को स्पष्ट रूप से प्रकट कर सकती है। इस कहानी के साथ आप प्रभु यीशु हम पापियों के ढूंढने आने और हमें पापों से निजात दिलाने की सारी बात सरल शब्दों में आप बता सकते हैं। एक न्यायाधीश और उसके सामने लाये गये उसके अपने अपराधी पुत्र के लिये जज का कर्तव्य निभाते हुए उस पर कड़ा दण्ड देने और फिर जज की कुर्सी छोड़कर उसका दण्ड खुद चुका देने की कहानी हमारे पिता परमेश्वर के हमारे लिये प्रेम को स्पष्ट रीति से दर्शा सकती है जिसमें हमें किसी धर्म की बात को बीच में लाने की ज़रूरत नहीं पड़ती है। बल्कि मैं सच कहूँ तो हमें धर्म-परिवर्तन का विरोध ही प्रकट करना चाहिये ताकि सुनने वाला भी समझ जाये कि हम धर्म के नहीं अपितु

जीवन के तथा मन के परिवर्तन में रूचि रखते हैं ताकि उसका अधर्म से परिवर्तन हो जाये और वह मृत्यु से जीवन में प्रवेश कर सके।

बाइबल में दिये उड़ाऊँ पुत्र तथा बीज बोने वाले का दृष्टांत बहुत से ईश्वर के खोजियों को सत्य, मार्ग तथा जीवन अर्थात प्रभु यीशु (यूहन्ना 14:6) का और अंततः परमेश्वर पिता का व स्वर्ग का दर्शन करा सकता है।

पश्चाताप, विश्वास, पाप-क्षमा तथा परमेश्वर के प्रेम तक लाने वाला समाचार ही सच्चा सुसमाचार है।

3

सुसमाचार प्रचार का भारतीयकरण

कई लोग संदर्भीकरण को ठीक नहीं मानते परंतु यह एक कड़वा सत्य है कि विदेशी प्याले में देसी लोगों को सुसमाचार भाता नहीं है। बहुत बार हम विदेशी तरीके से सुसमाचार सुनाते हैं और उस पर तड़का यह कि हम अपने विदेशी सहायकों को बुलायें और सुसमाचार सुनने वालों की भीड़ (या फिर उनके आँकड़े) उनको दिखायें। हिंदू जनमानस को सबसे खलने वाली चीज यही है और इसी कारण यह दुष्प्रचार किया जाता है कि यह एक विदेशी धर्म है और "बाहर" से आ रहे पैसे से भारत में धर्म-परिवर्तन किया जा रहा है।

सारी सृष्टि का रचने वाला परमेश्वर विदेशी नहीं है, यह बात धार्मिक समझ रखने वाले और ईश्वर का भय मानने वाले इंसान को समझाना कठिन नहीं है, परंतु इसके लिये हमें अपनी संस्कृति में बने रहते हुये, अपने आस-पड़ोस

के लोगों की भावनाओं का सम्मान करते हुए प्रभु यीशु मसीह का सुसमाचार उनको सुनाना होगा।

भारतीयकरण की आवश्यकता

समझने वाली बात यह है कि राजा राममोहन राय जैसे कितने ही हिंदू प्रवर्तकों ने भारतीय समाज (खास तौर पर हिंदू) की विधवा विवाह, दहेज, कन्या भ्रूण-हत्या, बाल-विवाह आदि कुरीतियों के उन्मूलन के लिये बड़े कदम उठाये, और उनका ऐसा विरोध नहीं हुआ जितना मसीहीयत का। हालांकि इसके कई कारण हो सकते हैं, जिनमें से एक आप यह भी कह सकते हैं, कि शैतान को बाकि सब चीजों से इतना फर्क नहीं पड़ता जितना कि मसीह के प्रचार से – सही बात है। इसके अलावा अपने अति सुदीर्घकालीन (बहुत लंबे समय के) इतिहास में अनेक विकृतियों का शिकार बनता हुआ हिन्दू समाज अस्पृश्यता (जातिगत छूआछूत) को आज भी धर्म का अंग मानता है। यह बात हमारे समाज की रग-रग और नस-नस में बहुत गहरी बैठ चुकी है जिसके कारण समाज का एक तबका सदियों से पिसता चला आ रहा है। गुरु नानकदेव, आचार्य रामानुज, गुरु बसवेश्वर, शंकरदेव, स्वामी दयानन्द, नारायण गुरु, विनायक दामोदर सावरकर, गांधीजी सरीखे अन्य अनेक महापुरुषों के अथक प्रयास भी इसे खत्म करने में अपर्याप्त सिध्द हुए हैं।

डॉक्टर अम्बेड़कर, ज्योतिराव फुले आदि नेताओं ने हिंदू धर्म में हो रहे अस्पृश्यता (जातिगत भेदभाव - छूआछूत) का विरोध किया, और कुछ हद तक समाज ने इन बातों को ग्रहण भी किया है। यह बात भी कुछ हद तक सही है कि अपने ही घर में छूआछूत का जहर सहते शूद्रों ने यीशु मसीह के ईश-प्रेम के सुसमाचार को सबसे पहले और बड़ी मात्रा में ग्रहण किया है। तौभी यह बात भी सच है कि मसीही विश्वास सबके लिये है और हमें इसे जाति और वर्ण का भेद किये बिना सुनने वाले के अनुभव तथा जीवन मूल्यों को ध्यान में रखते हुए सुनाना है।

विश्व में बड़े बड़े नेता क्षमा, समता और शांति के नाम पर नोबल पुरस्कार तक जीत रहे हैं जबकि प्रभु यीशु का समता का अर्थात इंसान में जाति

इत्यादि के कारणों से भेद न करने का, प्रेम का, क्षमा का, शांति का तथा मोक्ष का सुसमाचार इन सब बातों से बढ़कर है। यह इंसान को इस जगत में आशीषित और इस जगत के बाद अनंतकाल का जीवन स्वर्ग में बिताने का मार्ग बताता है। ईश्वर को व्यक्तिगत रूप से पहचानना, पश्चाताप कर क्षमादान पाना और जीवन परिवर्तन (और ह्रदय परिवर्तन) ही सारी समस्याओं (जो सब पाप के ही कारण है) का निदान है। हमें बस इसे सही रूप में अपने भाई-बहनों तक पहुँचाने की ज़रूरत है।

साधू सुंदर सिंह ने कहा कि मसीहीयत आनन्द, शांति तथा आशा से भरपूर जीवन जीने का एक तरीका है, और उन्होंने यह भी कहा कि विदेशी प्याले में आप भारत को सुसमाचार नहीं दे सकते। वे स्वयं भगवा वस्त्रों में भारतीय साधू की वेश-भूषा में रहते थे। दान-दक्षिणा में मिले भोजन से गुजारा करते थे अन्यथा भूखे ही रह लेते थे और गाँव-गाँव जाकर मसीह के प्रेम का सत्संग सुनाया करते थे।

हममें से कितने लोग अपने सारे ऐशो-आराम छोड़कर प्रभु के लिये सर्वस्व न्योछावर करने के लिये तैयार हैं? मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि हम सबको साधू बन जाना चाहिये बल्कि मेरा प्रश्न हमारी तैयारी के बारे में है। क्या हम सच में किसी भी कीमत पर प्रभु यीशु का सुसमाचार सब तक पहुँचाना चाहते हैं? जैसा मैंने पहले लिखा कि पौलुस (1 कुरिन्थियों 9:19-22) हमें इसी बात के लिये उत्साहित करता है।

एक देसी भारतीय व्यक्ति को 'मसीह का सुसमाचार' एक दूसरे ग्रह की बात लगती है। जो भाषा इस्तेमाल करने के हम आदी हो जाते हैं, वो भाषा और उसमे प्रयोग किये गये कई शब्द देसी भारतीय और हिंदू समझ से बाहर हैं। इन शब्दों में सुसमाचार सुनाना और उनसे यह अपेक्षा करना कि वो समझ लें और उसी समय 'अपना जीवन मसीह को दे दें', वैसा ही है जैसे एक अंग्रेज व्यक्ति को केले के पत्ते पर दक्षिण 'अप्पम' या राजस्थानी दाल-बाटी दे दी जाये और बिना छुरी-काँटा दिये उससे कहा जाये कि वो खाये, पसंद करे, तारीफ करे और हमेशा के लिये इस भोजन को और इसके परोसने के तरीके को अपना ले।

एक विदेशी गोरे आदमी को, जो छुरी-काँटे से खाना खाने का आदी है, उसे आप एकाएक हाथ से वो खाना खाने को मजबूर करें जो उसे खाने की आदत नहीं है और न ही उसका स्वाद उसने पहले कभी चखा है, कितना तर्कसम्मत होगा?

वो खाना अच्छा है इसमें कोई दो राय नहीं है और न ही इस बात में कोई शक है कि 'हम तो ऐसे ही खाते रहे हैं', पर फिर भी, हम जिस बात में सहज महसूस करते हैं, यह ज़रूरी नहीं है कि कोई और भी उसमें सहज महसूस करे। एक उत्तर भारतीय के लिये दक्षिण भारत का खाना उतना ही अजीब महसूस होता है जितना कि दक्षिण भारतीय के लिये उत्तर भारत का।

अपने एक मित्र के साथ रहते हुए हमने इस बात को बहुत गहराई से महसूस किया। हमारे कुछ दक्षिण भारतीय मित्र मेरे हाथ के कुछ व्यंजन बहुत पसंद करते थे परंतु जब उन्होंने वो ही व्यंजन बनाये तो उसमे नारियल का तेल डाल दिया। मेरी पत्नि प्रेरणा ने बड़े मन से जो इतना स्वादिष्ट छोले की सब्जी बनाई, वो अपने इस मित्र को देने पर हमें यह सुनने को मिला, 'बस, इसमें करी पत्ता और पड़ जाता तो मज़ा आ जाता'।

मैं और मेरी पत्नि यूँ तो दक्षिण भारतीय खाना (इडली-दोसा आदि) बहुत पसंद करते हैं और अपने घर में भी कभी कभी सांभर-दोसा बनाते हैं, परंतु जब कभी हम दक्षिण भारतीय रेस्त्राँ में उत्तर भारतीय व्यंजन ऑर्डर करना चाहते हैं, तो प्रेरणा उसके बनाने की विधि भी साथ ही में पूछ लेती है कि कहीं ऐसा न हो कि वे नारियाल के तेल में और करी पत्ता डाल के उत्तर भारतीय सब्जी का बेंड बजा डालें।

व्यंग्य के तौर पर कही इस बात में एक गहरा संदेश छुपा है। मैं न तो दक्षिण भारत के खिलाफ हूँ और न ही उनके खान-पान के तौरतरीकों के, परंतु मेरे कहने का मतलब सिर्फ इतना है कि जैसे एक ही देश के वासी होते हुए भी हममें इतना अंतर है जिसके कारण एक दूसरे से सामंजस्य बिठाने में हमें दिक्कत होती है तो फिर आध्यात्म तो फिर 'अंदर की बात है'।

सुसमाचार प्रचार का भारतीयकरण

हम किस चीज का भारतीयकरण (संदर्भीकरण) करें - सुसमाचार का या सुसमाचार प्रचार करने के तरीके का?

प्रभु यीशु मसीह का उद्धार असीमित है और समय की सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। पाप क्षमा के लिये पश्चाताप तथा उद्धार के लिये प्रभु यीशु पर विश्वास करने के सुसमाचार का, जो सदैव हरेक के लिये प्रासंगिक रहता है, को बदलना ठीक नहीं है। हमें सच्चाई को तोड़ने मरोड़ने की ज़रूरत नहीं है। बल्कि मैं तो यह कहता हूँ कि सुसमाचार में किसी प्रकार की मिलावट या बदलाव असल में एक पाप है तथा विधर्म (cult) को पैदा करता है।

ज़रूरत इस बात की है कि सुसमाचार की सच्चाई को उस समाज और परिवेश में ढालकर बतायें जिसमें हम प्रचार कर रहे हैं। ऐसी भाषा और तौर-तरीकों का इस्तेमाल करना, जिनसे आम हिंदू व्यक्ति अनजान है, अन्ततः बेकार साबित होता है, जबकि उस भाषा तथा तरीके का इस्तेमाल करना श्रेयस्कर है जिसे आम आदमी समझता है, और स्वीकार करता है। एक हिंदू व्यक्ति से बात करते समय यदि बार बार प्रभु यीशु मसीह को आप 'ईश्वर' नाम से सम्बोधित करने के बजाय 'खुदा' या 'खुदावंद' बोलें तो आप सुनने वाले के मन में जगह बनाने के बजाय एक दूरी पैदा कर सकते हैं क्योंकि उसे लगेगा कि आप अपने धर्म तथा ईश्वर से दूर होकर कुछ और ही बन गये हैं, आपका तो सत्यानाश हो ही गया है अब आप उसका भी सत्यानाश कर देंगे। उसको ऐसी गलतफहमी न हो उसके लिये सही शब्दों का चयन बहुत ज़रूरी है, जैसे कि मुस्लिम के लिये नया नियम 'इंजील' कहला सकता है, इस्रायली व्यक्ति के लिये यीशु 'यशुवा', उसी प्रकार एक हिंदू के लिये उद्धार को 'मोक्ष', सुसमाचार को 'शुभ-संदेश', मसीही गीत को 'भजन', प्रचार को 'सत्संग', तथा क्रिसमस अथवा बड़े दिन को 'यीशु जयंती' या 'प्रभु यीशु जन्मोत्सव' कहा जा सकता है ताकि उन्हें समझ आये। ऐसा होने पर ही वे इससे आत्मीयता महसूस कर सकते हैं और फिर उसमें अपनी इच्छा से भाग ले सकते हैं तथा उसे ग्रहण कर सकते हैं।

इस बारे में एक बार आध्यात्मिक टीवी चैनल 'आस्था' पर देखे उस कार्यक्रम की झलक आज भी मुझे याद है जिसमें भाई शिष्य थॉमसन ने पहले संस्कृत भाषा में नये नियम का अंश पढ़ा और फिर उसकी व्याख्या बड़े शांत स्वर में की। यह तरीका मुझे बहुत अच्छा लगा। आम हिंदू व्यक्ति को कोट-पेंट में पुलपिट से ऊँची आवाज में प्रचार करने वाले पाश्चात्य तौरतरीकों के प्रचारक के बजाय भारतीय वेश-भूषा में बैठे, शांत स्वभाव से नम्र भाषा में ईश्वर प्रेम तथा आध्यात्म की शिक्षा देता गुरू ज्यादा भाता है। साधू सुंदर सिंह ने यही तरीका अपनाया और बहुत सी आत्माओं को जीत लिया। विरोध तो उनका भी हुआ, परंतु अपने जीवनकाल में उन्होंने बड़ी संख्या में लोगों को प्रभु के राज्य की ओर फेरा।

मैं यह नहीं कहना चाहता हूँ कि जो पहले तरीके से प्रचार कर रहे हैं, उनका प्रचार गलत है। सुसमाचार तो एक ही है, पवित्र आत्मा भी एक ही है और उद्धार भी। उस तरीके से भी बहुत सी आत्मायें बच रही हैं, जिनके लिये प्रभु का धन्यवाद हो, परंतु मैं आम जनमानस की बात कर रहा हूँ जिसमें मसीह का सुसमाचार या तो पहुँच नहीं रहा या पैठ नहीं बना पा रहा। चर्च में खड़े होकर आप प्रचार करें इसका मैं विरोध नहीं कर रहा हूँ, बल्कि गली-मोहल्लों तथा जनसाधारण के बीच (अपने पड़ोसियों और रिश्तेदारों के बीच) में सुसमाचार प्रचार (evangelism) के तरीके पर अपने विचार व्यक्त कर रहा हूँ।

संदर्भीकरण (या अपने मामले में – भारतीयकरण) का मतलब है सुसमाचार की सच्चाई को सुनने वाले की समझ, बुद्धी-स्तर, संस्कृति को ध्यान में रखते हुए उसकी ही भाषा में उस तक पहुँचाना ताकि वो समझ सके। संदर्भीकरण का मतलब यह कतई भी नहीं है कि कठोर लगने वाली बातों को हम नकार दें (जैसे की पतित मनुष्य की पापमय स्थिति, तथा पाप का दंड – नर्क), या उस पर कुछ आवरण चढ़ाकर उसे पेश करें ताकि सामने वाला उसे आसानी से निगल सके। इसका मतलब यह है कि सत्य को ऐसे पहुँचाया जाये कि वो समझ में आ सके।

कई बार हमें सच्चाई जानने की इच्छा रखने वाले से शास्त्रार्थ (सकारात्मक वादविवाद) करने के लिये भी तैयार रहना होगा जैसे पौलुस ने प्रेरितों के

काम 17 अध्याय में दिखाया है, परंतु ध्यान देने योग्य बात यह है कि वो उनकी वेदियों तथा मूरतों के बीच घूमा, उनकी जानकारी पायी और फिर उत्साह के साथ मसीह की मृत्यु तथा पुनत्र्थान का प्रचार करने लगा। सुसमाचार सामने वाले को समझ में आना ज़रूरी है। ऐसा सुसमाचार जो समझ में न आये, वह न सुनाये गये सुसमाचार जितना ही प्रभावी है, और वरन यदि वह गलतफहमी पैदा कर दे, तो वो और भी नुकसानदायक है।

हरेक संस्कृति में इंसान का जीवन की ओर अपना एक अलग नज़रिया होता है। इस पर ज्यादातर कोई सवाल भी नहीं करता, और जैसे ही आप उस पर सवालिया निशान लगाते हैं, आप समीक्षा (और कभी उस से बदतर - प्रतिक्रिया/आलोचना) के घेरे में आ जाते हैं।

बाहर से आये विदेशी प्रचारक हिन्दुस्तानी संस्कृति को जल्दी से नहीं समझ सकता और इस प्रकार उसका बताया सुसमाचार या तो लोगों को समझ ही नहीं आता, या फिर वो गलत समझ लेते हैं। दोनो ही मामलों में हम वो फल नहीं पाते जिसकी अपेक्षा हम करते हैं। अब वो जमाना चला गया है जब लोग इस बात से बेखबर थे और विदेशी मिशनरी लोगों को स्वीकार कर लेते थे। अब समय बदल गया है और लोग अपने धर्म के प्रति जागरूक हो गये हैं और मसीह का सुसमाचार उन्हें अपनी भावनाओं पर आघात लगता है। इस देश के अपने लोगों के द्वारा अपनी संस्कृति में बने रहते हुए, अपनी स्थानीय भाषा में सुसमाचार सुनाने से ही अब हम जनमानस तक पहुँच सकते हैं।

हम प्रभु यीशु का सुसमाचार सुनाने के लिये कई बार इतने लालायित रहते हैं कि हम एक व्यक्ति ढूंढते हैं और उस पर पिल पड़ते हैं। यह गलत है। मेरे विचार में ज्यादातर हिंदू भाई (और बहिनें और भी ज्यादा) ईश्वर में श्रद्धा रखते हैं और उसके बारे में बातचीत करने को तैयार रहते हैं। यीशु मसीह का सुसमाचार भला है और आपकी मंशा भी अच्छी है परंतु आपको पवित्र आत्मा को अपना समय देना होगा ताकि वो काम करे।

हमें पहले सुनने के लिये तैयार रहना चाहिये। सुनिये कि उनकी क्या भावना है, क्या वो सोचते हैं और ईश्वर को देखने का उनका तरीका क्या है। पहले

से ईश्वर के बारे में सोचने के उनके तौरतरीकों से भरे हुए उनके कप में मसीह के सुसमाचार को और भरने से बस वो छलक कर बहने लगता है और उसका बहुत ही कम प्रभाव सामने वाले पर पड़ता है। आपके सामने बैठे व्यक्ति की सोच में बहुत सी अच्छी बातें हो सकती हैं, उनके लिये आप उनका सम्मान करें, उनको सराहें और उनकी पूरी बात खत्म होने के बाद ही आप ईश्वर की सच्चाई के बारे में उनको बतायें। यदि आप उनको पहले खाली होने का मौका दें और फिर उसमें नई बात डालें तो संभव है कि वो आपकी बात को सुनें और फिर उसे अपने नज़रिये से देखें और (भविष्य में) विश्वास करें। उसी समय उससे विश्वास करने की अपेक्षा करना भी ठीक नहीं है।

जो चीजें सच में सराहने योग्य हैं उनको ज़रूर सराहें और उसके आगे बात जोड़ते हुए आप प्रभु यीशु मसीह के बारे में और बाइबल की शिक्षाओं के बारे में सामने वाले को बतायें। किसी में कमी ढूंढना आसान है और उन कमियों को उजागर करके उसको मसीहीयत से दूर करने का प्रयास करना ठीक तरीका नहीं है। यह ऐसा ही है जैसे एक लंगड़े व्यक्ति को "लंगड़ा" कहना या अंधे व्यक्ति को अंधा कहना। क्या आप सोचते हैं फिर आप उससे आप मित्रता कर सकेंगे और उसे सुसमाचार सुना सकेंगे?

मेरे विचार में दो बराबर की लाइनों में से एक को बड़ी करने के दो तरीके हैं– पहला ये कि हम पहली लाइन को थोड़ा सा छोटा कर दें या दूसरा, कि हम दूसरी लाइन को बढ़ा दें। मैं सोचता हूँ कि इसमें दूसरा तरीका अच्छा है। किसी को नीचा दिखाने, और अपशब्द बोलने के बजाय हम बाइबल की सच्चाईयों को और प्रभु यीशु की अच्छाइयों का बखान करें तो बाकि बातें अपने आप ही गौण होती चली जायेंगी।

किसी भी चीज को देखने के दो नज़रिये हो सकते हैं। आप एक ही बात का नकारात्मक पहलू देख सकते हैं या फिर सकारात्मक। अपने मूर्तिपूजक मित्र को आप ईश्वर-भक्त इंसान के रूप में भी देख सकते हैं और आप उससे सच में पूछ सकते हैं कि उन्हें जीवनभर की ईश्वर-भक्ति के बाद मोक्ष का कितना आश्वासन मिला है और उसके बाद आप अपना अनुभव बतला सकते हैं। इस

तरीके से आप एक स्वस्थ संबंध तो बनायेंगे ही, साथ ही निरंतर सुसमाचार बताने का मार्ग भी आपके सामने खुला रहेगा।

इसके विपरीत मैंने देखा है कि कई लोग हिंदू धर्म की, उसके धर्मशास्त्रों की तथा उसके अनुयायियों की बुराई व आलोचना करते हैं। जिनसे हमें प्रेम करना है उनसे घृणा करते हैं और फिर नौकरी के तौर पर उनको सुसमाचार सुना देते हैं। बिना प्रेम के तो हम उनके लिये प्रार्थना भी नहीं कर सकते तो फिर ऐसे सुसमाचार प्रचार से क्या लाभ होगा, जबकि द्वेष-भाव आपमें सामने ही दीख पड़ता हो। मेरा मानना है कि हमारे मुँह और लिखित सामग्री से किये गये सुसमाचार प्रचार से ज्यादा हमारे प्रेम, प्रार्थना तथा आत्मिक जीवन से मसीह का सच्चा सुसमाचार अपने आप लोगों तक पहुँचता है और जीवन फिर जीवन को छूता है और उसे बदलता है।

यीशु मसीह तथा बाइबल का हिंदूकरण

कई लोग एक कदम आगे चले जाते हैं और मसीह को अन्यान्य धर्मों में ढूंढने लगते हैं। माना कि प्रभु ने कहा है कि ढूंढोगे तो पाओगे, पर इसका मतलब यह नहीं की हम उन जगहों पर उसे ढूंढने लगे जहाँ वो नहीं है।

अब आप कहीं यह तो नहीं कहेंगे कि ईश्वर तो सब जगह पर है?

कई लोग ऐसा कहते हैं कि ईश्वर सब जगह है। गलत बात है। क्या ईश्वर नर्क में है, नहीं है। तो फिर अनर्गल (बेकार की) बात कहने से क्या फायदा। रटी रटाई बात नहीं कहनी चाहिये, उस पर विचार करना चाहिये और जो सही हो उस पर ही विश्वास करना चाहिये और वही बोलना चाहिये।

मेरे विचार में प्रभु यीशु मसीह तथा बाइबल का हिंदूकरण गलत है।

हिंदू धर्म की किताबों में यीशु मसीह का उल्लेख मिलता है – ऐसी बातें और इस बारे में लिखी गई किताबें, फायदा कम और नुकसान ज्यादा करती हैं। ऐसा नहीं है कि मैं उन लेखकों और प्रचारकों का विरोध करना चाहता हूँ जिन्होने ऐसी किताबें लिखी हैं और न ही मैं उनके शोध पर टिप्पणी करना

चाहता हूँ, पर मैंने इसके नुकसान को नज़दीकी से देखा है और समझा है। हो सकता है कि उन्होंने धर्म-शास्त्रों कि गहराई से जाँच की हो और ऐसा पाया हो कि उन धर्मशास्त्रों में प्रभु यीशु मसीह का जिक्र है, परंतु ऐसा कहकर हम क्या इस बात की खुली छूट नहीं दे रहें हैं कि यदि उन धर्मशास्त्रों में कुछ बातें ठीक हैं तो बाकि बातें भी ठीक ही होंगी। हालांकि कभी कभी यह तरीका कारगर हो सकता है पर ज़्यादातर ऐसा प्रचार करने वाले प्रचारक इस नुकसान को सही सही नाप नहीं पाते हैं और इस कारण बहुत से लोगों को मसीही विश्वास के पास लाने के बजाय उन्हें इससे दूर बने रहने का कारण अनजाने में ही दे बैठते हैं, जो कि दुर्भाग्यपूर्ण है। फिर भी ऐसे विद्वान जिन्होंने शोध किया है और पूरी जानकारी रखते हैं वे तो शायद अपने ज्ञान के कारण लोगों को समझा भी सकें और सत्य को सही तरीके से बता सकें, पर साधारणतया हमारे लिये इस तरीके का उपयोग करना फायदेमंद नहीं है, और ठीक भी नहीं।

हिंदू धर्म के शास्त्रों में कई जगह ऐसी प्रार्थनाओं (श्लोकों) का उल्लेख है जो ईश्वर से पाप से मुक्ति तथा अंधकार और मृत्यु से ज्योतिर्मय जीवन की ओर ले जाने के विषय में की गई हैं। आप ऐसे अंशो का उल्लेख कर सकते हैं, उनकी विवेचना कर ईश्वर-प्रेम की खुशखबरी सुनाने वाले प्रचारकों के बारे में मैं यह बात नहीं कह रहा हूँ, बल्कि उनके बारे में, जो कहते हैं कि यीशु मसीह हिंदू शास्त्रों में बताये गये किन्हीं देवताओं, ईश्वरों या अवतारों में से एक हैं। जैसे प्रजापति नामक ईश्वर को सृष्टिकर्ता परमेश्वर से तुलना करना, या यीशु मसीह के असल उच्चारण यशुवा को यःशिवा कहना और उसे महादेव नाम से प्रचारित करना। यह क्या ऐसा नहीं है जैसे हम सच्चाई पर एक आवरण चढ़ाकर वैसा प्रचारित कर रहे हों जैसा सामने वाला सुनना चाहता है जबकि सच्चाई उसके ठीक विपरीत हो। प्रभु यीशु को सिर्फ दलितों का उद्धारक कहकर प्रचार करना भी गलत है क्योंकि वो तो सारे जगत की ज्योति है जो इस अंधकारमय संसार में उतरी है ताकि हरेक को प्रकाशमान करे, चाहे वो किसी भी जाति या धर्म या देश का रहने वाला क्यों न हो।

यह यीशु मसीह के व्यक्तित्व के अनोखेपन (uniqueness) से समझौता करने जैसा है। मेरा सुझाव है कि ऐसा ना ही करें तो अच्छा है। बाइबल

अपने आप में परमेश्वर के बारे में हरेक बात को बताने, समझाने और हमें सुधारने के लिये काफी है क्योंकि यह स्वयं परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया उसका अपना वचन है (1 तिमुथियुस 3:16)।

यदि आपने हिंदू शास्त्रों का अध्ययन भी किया है, तौभी सिर्फ ऐसे वचनों का उल्लेख करना, जिसमें 'एक ईश्वर' की बात की गई हो या मूर्तिपूजा ना करने की बात की गई हो, उनका उल्लेख आप कर सकते हैं। उदाहरण – ऋग्वेद खंड 6, श्लोक 45, सूक्त 16 में कहा गया है कि ईश्वर एक ही है जिसकी आराधना की जाये, यजुर्वेद 32:3 में कहा गया है न तस्य प्रतिमाः अस्ति अर्थात उसकी कोई मूरत नहीं है। परंतु प्रभु यीशु से हिंदू देवी-देवताओं की समानता बताना बहुत खतरनाक बात साबित हो सकती है।

अगर हम परमेश्वर के वचन, बाइबल को सत्य मानते हैं और यह विश्वास करते हैं कि यह परमेश्वर का आधिकारिक वचन है जो कि न तो झूठा और न ही अधूरा, तो फिर हमें किसी भी और शास्त्र, धर्म की पुष्टी तथा आलोचना की ज़रूरत ही नहीं है, सिर्फ प्रभु यीशु के वचनों का प्रचार करें जो दोधारी तलवार से भी पैना है जो दिलों को चीरता है, और फिर उसका पवित्र आत्मा ही लोगों को बाध्य करता है कि वे अपने पापों से क्षमा मांगे और प्रभु के साथ आज्ञाकरिता का जीवन बितायें।

हमें अपने प्रयासों से नहीं बल्कि पवित्र आत्मा के द्वारा सेवा तथा सुसमाचार प्रचार करना है ताकि आत्मायें नाश होने से बच जायें और मसीह में विश्वास कर अनंत जीवन पायें। इसके लिये हमें परमेश्वर के वचन को सत्य तथा आधिकारिक मानकर जीवन बिताना पड़ेगा और जैसा वचन कहता है वैसा जीवन जीना होगा।

गलतियों की किताब 2 अध्याय और 20वीं आयत में लिखा है कि हरेक विश्वासी जो प्रभु यीशु के बलिदान में विश्वास करता है और उस पर आस्था रखकर प्रभु यीशु को अपना जीवन का उद्धारक मान चुका है, वह मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया जा चुका है और अब वो जीवित नहीं है, अपितु मसीह उसमें जीवित है। गलतियों 3:11 के आखिरी भाग में लिखा है कि धर्मी जन (अर्थात जिसने मसीह की धार्मिकता को ओढ़ लिया है) वह विश्वास से

जीवित रहेगा। प्रभु यीशु ने स्वयं कहा कि मनुष्य केवल रोटी से नहीं बल्कि परमेश्वर के वचन से जीवित रहेगा। कहने का मतलब यह है कि उद्धार पा लेने के बाद हमारा जीवन (जिसमें हमारी बोली, हमारा व्यवहार तथा हमारा आचरण व कर्म आता है) परमेश्वर के वचन के साथ आत्मसात होना ज़रूरी है। परमेश्वर से अपना संबंध ठीक किये बिना प्रचार करना समय की बर्बादी है।

सिर्फ किताबों से, परचों से और बोलने से नहीं, बल्कि संपूर्ण जीवन से प्रचार करें। प्रभु ने हमें ज्ञान नहीं जीवन दिया है (यूहन्ना 10:10)। विश्वास कीजिये, कि एक हिंदू व्यक्ति का जीवन, पाप, सृष्टी, ईश्वर, मृत्योपरांत-जीवन, मोक्ष आदि को देखने, सोचने तथा समझने का तरीका एकदम अलग होता है, जिसको समझे बिना आप उसे मसीह के सुसमाचार के नज़दीक नहीं ला सकते।

अब वो समय जाने लगा है जब चौराहों पर और भीड़ भरे स्थानों पर ट्रेक्ट आदि प्रचार सामग्री बांटा जाता था। किताबें और प्रचार सामग्री का इस्तेमाल आमने सामने सुसमाचार बताकर किया जा सकता है, परंतु उससे बढ़कर अब जीवन से सत्य का प्रचार करने का समय आ गया है। सच्चाई के प्रचार की एक कीमत है जो चुकाने के लिये हमें तैयार रहना होगा – जान देने तक विश्वासयोग्यता। विश्वास का जीवन जीयें।

जीवन से प्रचार करें, जीवन से जीवन बदलता है। व्यक्तिगत जीवन से व्यक्ति, व्यक्ति से परिवार, परिवार से बिरादरी, बिरादरी से समाज, समाज से देश और देश से दुनिया बदलती है।

4

विरोध क्यों होता है

इस बात को समझने के लिये कि विरोध क्यों होता है, हमें पहले यह जानना जरूरी है कि हिंदू धर्म क्या है या हिंदू कौन है। यह जाने बिना जब हम किसी बात को एक हिंदू व्यक्ति के सम्मुख रखते हैं, तो कई बार वो ऐसे नुकसान कर जाती है, जैसे बिना जाने ली गई दवाई कई बार फायदे के बजाय नुकसान कर देती है।

हिंदू धर्म क्या है?

हिंदू धर्म जिसे सनातन धर्म तथा वैदिक धर्म के नाम से भी जाना जाता है, विश्व का तीसरा सबसे बड़ा धर्म है - विश्व का सबसे पुरानी व्यवस्थित धर्म-व्यवस्था। यूँ तो इसमें ईश्वर तक पहुँचने के कई मार्ग सिखाये जाते हैं क्योंकि जनसाधारण को यही पता है कि सभी धर्म एक ही बात करते हैं

और सारे मार्ग उस ही एक ईश्वर तक पहुँचते हैं। मुख्यतया हिंदू धर्म में ईश्वर उपासना के दो प्रमुख मार्ग माने गये हैं – मूर्ति-पूजा तथा भक्ति मार्ग।

यह बहुईश्वरीय धर्म है जिसमें 33 करोड़ देवी-देवताओं के मानने वाले लोग हैं, परंतु केन्द्र में ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश (शिव) मुख्य त्रिमूर्ति ईश्वर माने जाते हैं जो कि सृष्टि निर्माण, उसका संचालन तथा उसका संहारक हैं। हालांकि ईश्वर के बारे में पूछने पर आपको एक ही जवाब मिलेगा – भगवान एक है। सृष्टि के बारे में भिन्न विचार हैं और कई एक मत ऐसा मानते हैं कि ब्रह्म ही सब कुछ है और बाकि सब माया है। मतलब जो सब कुछ है वो नहीं है पर हम ऐसा मानते हैं कि वो है। इसे समझना मुश्किल है।

अंदर की बहुत सी ऐसी बातों को आम आदमी न तो समझता है और न ही उसमें घुसना चाहता है, परंतु ज्यादातर लोग ईश्वर को मानते हैं।

मेरी पत्नि की एक मामी हैं, जो कि दिन के 8 घंटे पूजा-पाठ में ही गुजारती थीं, उनसे एक बार मैंने पूछा कि आप पूजा क्यों करते हैं, तो वो कुछ भी ठीक ठाक जवाब नहीं दे सकीं। उनका जवाब था, "सब करते हैं, तो हम भी करते हैं।" मैंने फिर पूछा, "क्या आपने कभी सोचा है कि सब क्यों करते हैं?" और उनका जवाब था कि उन्होंने कभी इस बारे में सोचा ही नहीं। मैंने कहा, "आप इसलिये करती हैं क्योंकि बचपन से आपने ऐसा ही देखा और सीखा है इसलिये आप ऐसा ही करती हैं।" तो उन्होंने हामी भरी। मैंने फिर पूछा कि बचपन से क्यों करती थीं और उनके जवाब न दे पाने पर मैंने बताया क्योंकि माँ-बाप ऐसा ही करते थे, और फिर उन्होंने हामी भरी। मैने फिर बताया कि वो क्यों करते थे क्योंकि उन्होंने भी बचपन से ऐसा ही देखा था और इसलिये ऐसा ही करते थे। अन्ततः उनकी बातों से उनको और हमको यह स्पष्ट हो गया कि इतनी श्रद्धा से वो जो पूजा करती थीं उसका कारण क्या था वो उनको मालूम ही नहीं था।

मैंने ही उनको बताया कि वो इसलिये सारी पूजा करती थीं क्योंकि उनको अपने परिवार में सुख-शांति चाहिये थी। मैंने उनको फिर शांति (फिलिप्पियों 4: 6-7, यूहन्ना 14:27, मत्ती 11:28) देने वाले ईश्वर के बारे में बताया।

ठीक इसी तरह बहुत से लोग जिनसे आप मिलते हैं, वो परिवार में सुख-शांति तथा जीवन में उत्तम आशीषों के लिये ही ईश्वर को याद करते हैं। कुछ ऐसे भी लोग हैं जो ईश्वर को पाने के लिये साधना करते हैं। ज्यादातर लोग ऐसे हैं जो प्यासे हैं और ईश्वर की ओर ताक रहे हैं ताकि वो उनकी प्यास बुझाये (आध्यात्मिक या भौतिक) परंतु उनको प्रार्थनाओं के सुनने वाले ईश्वर के बारे में ज्यादा मालूम नहीं है, आप सही स्थिति को भांप कर सच्चे ईश्वर के प्रेम के बारे में उनको बता सकते हैं ताकि वो जीवित परमेश्वर की ओर मुड़ें और उनके जीवन धन्य हो जायें।

मैंने बहुत ही कम नास्तिक हिंदू देखे हैं, इसलिये उनके साथ ईश्वर के बारे में बात शुरू करना मुश्किल नहीं है। पर यह ज़रूरी है कि किसी भी कारण से हम वादविवाद की स्थिति तक ना पहुँच जायें। अपने हिंदू मित्रों के साथ सुसमाचार बाँटने के समय मुझे एक बात बहुत बार सुनने को मिलती है कि तुमने यीशु को अपनाया है और उसके पीछे चल पड़े और तुममें उसके प्रति बहुत विश्वास हो गया है; यह तो विश्वास की बात है, किसी पर भी कर लो, मैं कृष्ण जी में (या किसी भी और देवता में) विश्वास करता हूँ, हमारे मार्ग अलग हैं पर ध्येय एक ही है और अंत में एक ही जगह पहुँचेंगे। ऐसे समय में अपने पर नियंत्रण रखकर, बहुत प्रार्थनाओं के साथ दोनों मतों का अंतर उनको अपने जीवन तथा वचनों से हमें बताना पड़ता है। यह सच में बहुत ही धैर्य और सहनशीलता का काम है।

इसके अलावा एक महत्वपूर्ण बात यह है कि हिंदू व्यक्ति ईश्वर का भय मानने वालों और सद-आचरण वाले व्यक्ति का सम्मान करते हैं और सत्संग की बातें सुनने में किसी भी धर्म के व्यक्ति का स्वागत दिल खोलकर करते हैं। आपका जीवन अपने आस-पड़ोस के लोगों के बीच में कैसा है, इस बात पर बहुत कुछ निर्भर करता है कि आप कितना अच्छा संबंध उनसे बना सकते हैं और सुसमाचार प्रचार कर सकते हैं।

यह बात सच है कि भारतीय जनमानस में ईसाई व्यक्ति की तस्वीर अच्छी नहीं है। हिंदी फिल्में और गोवा की स्थिति इसके लिये बहुत हद तक ज़िम्मेदार है, बिना आग के धूँआ नहीं उठता। अगर आप गाली गलौच करते हैं, या छोटी-बड़ी बातों पर लड़ाई-झगड़ा करते हैं, तो आप मसीही स्वभाव

नहीं दिखा रहे हैं। जीवन की दैनिक परिस्थितियों में क्या आप पाप से समझौता करते हैं? आपके आस-पास के लोग निरंतर आपको देख रहे हैं।

यदि आप मसीह को अपना आदर्श बनाकर, उसके स्वभाव (फिलिप्पियों 2:5) का प्रदर्शन करें तो उस पुरानी गंदी तस्वीर को हटाकर स्वच्छ, सादा, धार्मिक व्यक्ति की तस्वीर लगाने का आपका प्रयास सच में पवित्र आत्मा को एक मौका देगा की वो दिलों में काम करे और सुसमाचार के लिये रास्ते तैयार करता जाये और आत्माओं को बचाता जाये।

हिंदू धर्म में आचरण

डॉ. राधाकृष्णन ने अपने एक मिशनरी मित्र से कहा कि तुम ईसाई मुझे ऐसे साधारण लोग प्रतीत होते हो जो असाधारण दावे करते हो। इस पर उस मिशनरी मित्र का कहना था कि वे दावे उनके अपने नहीं, अपितु यीशु मसीह के थे जिनमें वे विश्वास करते थे। डॉ. राधाकृष्णन का इस बात का जवाब यह था कि यदि यह मसीह तुमको अच्छे व्यक्तित्व तथा आचरण का स्वामी नहीं बना पाया, तो इस बात की क्या गारंटी है कि मैं ईसाई बन जाऊँ तो मेरा जीवन बदल जायेगा। (सेलवेनायगम, पेज 132)।

आचरण हिंदू धर्म की नींव के पत्थरों में से एक है। हमारा आचरण तथा जीवन ही उन्हें पवित्र परमेश्वर के बारे में जानने के लिये प्रेरित कर सकता है।

हिंदू धर्म में आचरण के सख्त नियम हैं जिनका उसके अनुयायीयों को प्रतिदिन जीवन में पालन करना चाहिये। उनमें कुछ प्रतिबंध हैं और कुछ नियम हैं। यदि इनको जाने बिना आप एक हिंदू व्यक्ति से ईश्वर के विषय मे करेंगे तो उसकी बातों का प्रवाह आपको धर्म की ओर लेकर जायेगा, जिसके कारण आप सुसमाचार की सच्चाई उसको ना बता पायें। संभव है कि उसका जीवन का आचरण अच्छा हो और उसने किसी ईसाई को गलत आचरण करते देखा हो, तब तो मसीहीयत के बारे में बताना और भी कठिन हो जायेगा। परंतु यदि आप निम्न बातों को समझ लेंगे तो आपको पता रहेगा

कि वो किस दृष्टिकोण से बात कर रहा है, और आप सारी बातचीत को फिर से सही रुख की ओर ले जा सकते हैं।

प्रतिबंध:

हिंदू धर्म में दिये गये प्रतिबंध बाइबल की शिक्षाओं में भी पाये जाते हैं।

अहिंसा - किसी भी जीवित प्राणी को मन, वचन या कर्म से दुख या हानि नहीं पहुंचाना। स्वयं एवं दूसरों के प्रति करुणा का भाव। जीवन में इस विचार पर चिंतन करना चाहिए कि सभी प्राणी ईश्वर की दिव्यता के विभिन्न स्वरूप हैं। जैसे हम स्वयं से प्रेम करते हैं, वैसे ही हमें दूसरों को भी प्रेम और आदर देना चाहिए। अब क्योंकि मसीही लोग माँस का सेवन करते हैं, जो कि हिंदू धर्म के कई वर्गों में निषेध है, तो आप शायद उनको अपनी बातों से संतुष्ट ना कर सकें। परंतु यदि आप जानते हैं कि बंगाल के उच्च ब्राह्मण भी मछली का सेवन करते हैं, तो आप के लिये इस बात पर ज्यादा बहस नहीं करनी पड़ेगी, बल्कि तुरंत ही आप इस विषय से बात को बदलकर पाप और मुक्ति के विषय में ले जा सकते हैं। मैं जानता हूँ कि आप अनेक तर्कों से अपने आप को सही साबित कर सकते हैं, परंतु बहस जीतने के बाद यदि आप व्यक्ति को खो दें, तो क्या लाभ।

सत्य - सत्य में जीना, मन, वचन और कर्म से सत्यनिष्ठ रहना, दिए हुए वचनों को निभाना, प्रियजनों से कोई गुप्त बात नहीं रखना। हमेशा सत्य वचन कहना, लेकिन इस बात का ख्याल रखना एवं सचेत रहना कि बिना कारण किसी को हानि या क्लेश न पहुंचे। कहने का अभिप्राय है कि हमारी सत्यनिष्ठा एवं अहिंसक आचरण में असंगति न हो। अब यदि आप ईश्वर के प्रति ईमानदार हैं, तो आपका आचरण ग्रहणयोग्य होगा।

चोरी नहीं करना – जो वस्तु दूसरों की हो, उसे नहीं लेना। चोरी उस अज्ञान का परिणाम है जिसके कारण हम यह मानने लगते हैं कि हमारे पास किसी वस्तु की कमी है या हम उसके योग्य नहीं हैं। यह आवश्यक है कि हम अपने अंदर के सौंदर्य को देखना सीखें, हमारे अंदर के वैभव को देखें और यह समझ सकें कि दूसरों की वस्तु की आकांक्षा करना आंतरिक कमज़ोरी का परिणाम है। यह भी अपेक्षित है कि दांव-पेच एवं अवैध तरीकों से स्वयं

का लाभ न करें। क्या बाइबल ऐसा नहीं कहती (निर्गमन 20:15,17, मत्ती 15:19, 19:18)? यदि आपका जीवन बाइबल के आधार पर सही है, तो लोग स्वतः ही आपकी बात सुनने को बाध्य हो जायेंगे।

ब्रह्मचर्य – यौन निग्रह, ऊर्जा संरक्षण, संयम, कौमार्य व्रत। यौन अतिक्रम से बचना, विवाह से पहले अपनी पूरी शक्ति अध्ययन एवं प्रशिक्षण में लगाना, विवाह के पश्चात दांपत्य ढांचे के अंदर एवं प्रजनन के लक्ष्य से ही यौन क्रिया करना। यौन क्रिया सिर्फ इंद्रियों के उपभोग और संतोष का माध्यम ही नहीं हो। ब्रह्मचर्य का पालन करने में काफी बातों का ध्यान रखना चाहिए, जैसे योनिक बातचीत एवं मज़ाक, अश्लील चित्र एवं चलचित्र का निषेध। स्त्री और पुरुष को आपस में बातचीत करते समय मर्यादित ढंग से पेश आना चाहिए। यह बाइबल की भी शिक्षा है – आप अपने आप को जाँचे कि क्या कोई आप पर इस बारे में दोष लगा सकता है (निर्गमन 20:14, नीतिवचन 6:32, मत्ती 5:27-28, लैव्यव्यवस्था 18:22, 1 कुरिन्थियों 6:18-20, इफिसियों 5:5, 1 थिस्सुलुनुकियों 4:3-7, 1 पतरस 1:15-16)। यदि नहीं, तो आप सुसमाचार सुनाने के लिये तैयार हैं।

क्षमा – धैर्य, दूसरों के प्रति संतोषी एवं सहनशील बने रहना। हम समग्र विश्व को अपने विचारों के अनुकूल बनाने की कोशिश नहीं कर सकते, हर व्यक्ति का अपना चरित्र एवं आदतें हैं जो उसके बचपन एवं जीवन का प्रभाव है। यह ज़रूरी है कि हम दूसरों के प्रति धैर्य एवं करुणा से पेश आएं एवं उन्हें समझने की कोशिश करें, परिवार एवं बच्चों, पड़ोसी एवं सहकर्मियों के प्रति सहनशील रहें। सनातन धर्म के हर अनुयायी को दूसरों के साथ एवं जीवन की अलग-अलग परिस्थितियों के प्रति धैर्य एवं सहनशीलता का उदाहरण होना चाहिए। बाइबल में 47 आयतों में 59 बार यह शब्द लिखा है। (मत्ती 6:14,15; मरकुस 11:26 इत्यादि) इसके अलावा सहनशीलता पवित्र आत्मा का फल है जो हममें पाया जाना चाहिये। आपके जीवन की गवाही क्या परमेश्वर के वचन से मेल खाती है?

स्थिरता एवं चरित्र की दृढ़ता – जीवन में जो भी क्षेत्र हम चुनते हैं, उसमें उन्नति एवं विकास के लिए यह ज़रूरी है कि निरंतर कोशिश करते रहें एवं स्थिर रहें। किसी भी तरह चरित्र पर लांछन जैसी स्थिति आने पर उससे

बचना ही श्रेयस्कर है। मसीही भाषा में इसका मतलब यह है कि हमारी गवाही परिवार, पड़ोस तथा कार्यक्षेत्र में ऐसी हो जिससे लोग मसीह में हमारे चरित्र पर भरोसा कर सकें और इसकी मज़बूती को पहचानें (1 तिमुतियुस 4:12)। यदि आप एक बार तो अपने मसीही विश्वास के कारण एक काम को ना करने का निर्णय लेते हैं और उसका डंका बजाते हैं, और दूसरी बार उस काम को (चुपके से या खुले तौर पर) कर लेते हैं, तो यह ठीक नहीं है।

दया – करुणा, यह आध्यात्मिक विकास के लिए एक बहुत आवश्यक गुण है। यह उस जीवन दृष्टि का परिणाम है जो प्रत्येक प्राणी में एक दिव्य स्वरूप का दर्शन करती है और जिसके फलस्वरूप प्रत्येक प्राणी (इंसान तथा जानवर) को मात्र वस्तु के रूप में नहीं देखकर आत्मा के रूप में देखते हैं। दयालु सामरी की कहानी क्या इस दया तथा प्रेम को प्रदर्शित नहीं करती है? प्रभु यीशु की शिक्षा तो फिर सिर्फ अपने पड़ोसी से प्रेम करने (तथा दया दिखाने) तक की ही नहीं है, अपितु अपने दुश्मन से भी प्रेम (मत्ती 5:44, 22:39) करने की है।

सरलता – दूसरों को नहीं छलना, अपने प्रति एवं दूसरों के प्रति ईमानदारी से पेश आना। हमारे चारों ओर फैली हुई और हमारे अंदर – दोनों प्रकार की धोखाधड़ी का संपूर्णतः त्याग। यह भी बाइबल के आधार पर आत्मा के फल में से एक है (गलतियों 5:22)। हममें घमण्ड नहीं होना चाहिये जो हमें दूसरों से बड़ा समझने के लिये प्रेरित करता है, वरन हमें दूसरों को अपने से बेहतर समझना है। यदि आप (फिलिप्पियों 2:3) ऐसा कर सकें तो आप स्वतः ही नम्रता, दीनता तथा सरलता का जीवन जीना शुरू कर देंगे।

मिताहार – भोजन का संयम, यह ज़रूरी है कि हम जीने के लिए खाएं न कि खाने के लिए जिएं। स्वस्थ खाना खाकर एक स्वस्थ ज़िंदगी जीने में एवं अपनी इंद्रियों की तृप्ति के लिए भोजन करके खाने को व्यसन बनाने में बहुत फर्क है। यह आवश्यक है कि नियत समय पर खाना खाएं, मांस, अंडे एवं मछली न खाएं। मत्ती रचित सुसमाचार के 11 अध्याय और 19 आयत में प्रभु यीशु मसीह पर पेटूपन का आरोप लगाया गया, जो कि झूठा था, परंतु यदि हमारे बारे में यह सच हो तो यह मसीही आचरण के खिलाफ है,

क्योंकि जैसा मसीह का स्वभाव था, वैसा ही हमारा भी होना चाहिये (फिलिप्पियों 2:5)।

इन प्रतिबंधों का पालन हिंदू धर्म के प्रत्येक अनुयायी को करना चाहिए। परंतु यदि आप ये जानते हैं तो आप देखेंगे कि ज़्यादातर लोग इसमें असफल होते हैं। कोई मांस-सेवन कर रहा है तो कोई अपनी इंद्रियों को वश में नहीं रखता है। इस प्रकार अपने ही आप वे अपने आप को पापी बना लेते हैं, और पाप-क्षमा का सुसमाचार सुनने पर उनका विवेक तुरंत ही उन्हें प्रभु यीशु से पाप-क्षमा पाने की ओर इशारा करने लगेगा।

इसके अलावा हिंदू व्यक्ति के लिये जीवन जीने के कुछ नियम हैं जिनका पालन उसे करना चाहिये। जो ऐसा नहीं करते, उनसे बात करने के लिये भी आप अपने आपको तैयार कर सकते हैं, परंतु इससे पहले आपको अपने आपको भी जाँचना होगा, कि परमेश्वर के वचन के आधार पर क्या आप भी इन नियमों का पालन करते हैं या नहीं। यहाँ हरेक हिंदू नियम के साथ मैं बाइबल के वचन से वो बातें लिख रहा हूँ जो समान संदेश रखती हैं और जिनके लिये परमेश्वर हमसे आज्ञाकारिता की अपेक्षा रखता है।

नियम:
प्रतिबंधों की ही तरह हिंदू धर्म में जीवन जीने के निम्न नियम हैं। मैं साथ में ही आपको बाइबल की शिक्षा का भी हवाला देता हूँ ताकि आप देखें कि परमेश्वर की आपसे क्या इच्छा है, यदि आप वचन में दी गई आज्ञाओं का पालन करें तो निश्चय ही अपने जीवन द्वारा सुनने वाले हिंदू व्यक्ति को जीत लेंगे।

पश्चाताप - विनम्र रहना एवं अपने द्वारा की गई भूल एवं अनुपयुक्त व्यवहार के प्रति असहमति एवं शर्म ज़ाहिर करना। यह ज़रूरी है कि इतनी विनम्रता रखें कि दूसरों के सामने अपनी भूलों की क्षमा याचना कर सकें।

क्या कुछ ऐसी ही शिक्षा हमें बाइबल में नहीं दी गई है - [लूका 13:3, प्रेरितों. 2:38, 3:19, 1 यूहन्ना 1:9, याकूब 4:7-10, 5:16]

संतोष - ईश्वर ने जितना भी दिया है, उसमें संतोष रखना, जो भी है और जितना भी है, उसे स्वीकार करने का भाव रखना जो अप्रत्यक्ष रूप से जीवन के प्रति कृतज्ञता का भाव है। कृतज्ञता से जीवन जीना ही संतोष की परिभाषा है, न कि नकारात्मक भाव से किसी के द्वारा शोषित होना।

बाइबल में प्रभु परमेश्वर की अपने शिष्यों से क्या अपेक्षा है - [इब्रानियों 13:5, 1 तिमु. 6:6, 1 थिस्स. 5:18, मत्ती 6:25-34]

दान - हम अपने प्रयासों को अपना न मानकर ईश्वर की देन मानें। हमें अपने परिश्रम के फल के एक हिस्से को धार्मिक एवं आध्यात्मिक संस्थाओं में दान करना चाहिए। मानवता को असल में आध्यात्मिक ज्ञान की ज़रूरत है क्योंकि ईश्वर से मानवता का अलगाव हमारी सभी समस्याओं का मूल कारण है।

बाइबल हमें क्या बताती है - [मत्ती 6:3, मलाकी 3:10, प्रेरितों. 2:45]

आस्था - स्वयं में, अपने आध्यात्मिक मार्ग में, धर्म में एवं प्रकटित वेद में, गुरु महाराज एवं ईश्वर में निष्ठा एवं विश्वास रखना।

प्रभु यीशु हमसे क्या कहते हैं -[मरकुस 11:22, यूहन्ना 14:1, मत्ती 22:37]

ईश्वर पूजन – हिंदू धर्म में सिखाया जाता है कि किसी भी तरह से अपने घर में ईश्वर पूजा के लिए एक अलग कक्ष नियत करना। इष्ट देवता की वेदी बनाना एवं अपने गुरु के चित्रों को रखने की व्यवस्था करना, अगरबत्ती जलाना, उस जगह को साफ एवं ढंग से रखना। आध्यात्मिक गुरु एवं ज्ञानी संतों द्वारा दिए गए सुझाव एवं मार्गदर्शन के अनुसार रोज़ पूजा करना। यह बहुत ज़रूरी है कि एक गृहस्थ होने के नाते एक हिंदु व्यक्ति ज़्यादा से ज़्यादा घरों में प्रभुभक्ति और आध्यात्मिकता का प्रकाश फैलाए।

बाइबल के मानने वाले प्रभु यीशु के विश्वासी के लिये परमेश्वर की क्या मर्जी है - [लैव्य. 19:4, 26:1, 1 यूहन्ना 5:21, मत्ती 6:33, मत्ती 28:19-20]

सिद्धांत श्रवण तथा मति- प्रकटित वेदों के व्याख्यानों एवं सम्मेलनों को सुनना। एक ज्ञानी या प्रामाणिक आध्यात्मिक गुरु की खोज करके उनकी वैदिक कक्षाओं में नियमित रूप से उपस्थित होकर उनके आदेश पर चलना। एक प्रामाणिक गुरु के मार्गदर्शन से पुरुषार्थ करके अपनी इच्छा शक्ति एवं बुद्धि को आध्यात्मिक बनाना, धर्म गुरुओं द्वारा सिखाई गई नित्य साधना का पालन करना।

इस बारे में बाइबल के मानने वालों के लिये निम्न सिद्धांत हैं - [रोमियो 10:17, प्रेरितों. 2:42-47, गलतियों 3:11, मत्ती 4:4]

उपवास - धार्मिक व्रत, अपने धर्म, गुरु एवं ईश्वर के प्रति लिए गए धार्मिक व्रतों के प्रति एवं निष्ठावान रहना। मांस एवं नशीली पदार्थों का सेवन नहीं करना, अवैध यौन संबंध, जुए आदि से बचकर रहना।

उपरोक्त हिंदू रीति के समकक्ष मसीही विश्वास में क्या बातें सिखाई गई हैं - [यशायाह 58:1-12, मत्ती 6:16-18, प्रेरितों. 13:2-3, इफि. 5:18]

जप-तप **- मंत्रोच्चारण करना**। इसे मन का झाड़ू माना जाता है, और यह भी माना जाता है कि जैसे रोज़ स्नान करके लोग अपने आपको स्वच्छ रखते हैं, उसी तरह प्रभु का नाम उनके तुच्छ एवं नकारात्मक विचारों की सफाई करता है। जीवन में कैसी भी दुष्कर परिस्थिति सामने आये, उसका अनुशासन एवं परिपक्वता से सामना करना। उत्साह एवं प्रसन्नता से व्रत रखना, पूजा करना, पवित्र स्थलों की यात्रा करना। विलासप्रियता एवं फिजूलखर्ची न चाहकर सादगी से जीवन जीना। इंद्रियों के संतोष के लिए अपने आप को अंधाधुंध समर्पित न करना।

जप-तप हिंदू तरीका है ताकि ईश्वर को याद किया जाये, परंतु हम विश्वासियों के लिये क्या बातें सिखाई गई हैं - [यूहन्ना 15:3, रोमियो 8:4, कुलुस्सियों 3:1-17, याकूब 4:7]

इन नियमों को पढ़कर आपको शायद पता चला हो कि क्यों हिंदू धर्म के अनुयायी सभी धर्मों को एस जैसा मानते हैं, क्योंकि उनकी नैतिक जीवन

जीने की शिक्षायें अन्य सभी धर्मों के समान है। इसलिये हमें इस बारे में सावधान भी रहना चाहिये कि हम अपनी सारी बातें सिर्फ धर्म पर आधारित न करें अपितु अपने व्यक्तिगत अनुभव, ईश्वर के प्रेम और हमारी अपने प्रयासों से उस तक ना पहुँच पाने की बात को भी उनके सामने उद्धृत करें। सबसे बढ़कर यहाँ दिये गये बाइबल सिद्धान्तों के अनुसार अपने जीवन को ढालना हमारे लिये सबसे प्रमुख काम है क्योंकि हमारे कर्म हमारे शब्दों से ऊँचा बोलते हैं और हिंदू व्यक्ति कर्मों की भाषा को बहुत बेहतर समझता है। बाइबल भी कहती है कि जैसे आत्मा के बिना शरीर मुर्दा हो जाता है उसी प्रकार बिना कर्म के हमारा विश्वास भी मृत होता जाता है (याकुब 2:26; 2:17; 2:14-26)।

विरोध क्यों होता है?

तो जब हिंदू धर्म की नैतिक शिक्षायें सही ही हैं और मसीही लोग भी ईश्वर के प्रेम के साथ इन बातों का भी उल्लेख करते हैं तो फिर विरोध क्यों होता है? इसके बहुत से कारण हैं, जिनमें से कुछ का मैं यहाँ उल्लेख करना चाहता हूँ –

1. कथनी और करनी का अंतर - पहला तो यह ही कि जैसा आचरण हमें बाइबल में सिखाया गया है, हम उसका प्रदर्शन नहीं कर पाते हैं। सच कहूँ तो हम में से बहुत ही कम लोग व्यवहारिक तौर पर बाइबल को परमेश्वर का सत्य वचन मानते हैं। किताबी तौर पर और कहने के लिये तो हम कहते हैं कि 'बाइबल परमेश्वर का वचन है', परंतु जब उसके द्वारा जीवन जीने की बात आती है तो हम इससे किनारा करने लगते हैं या फिर समझौता करते हैं, क्योंकि हमें इसमे लिखी आज्ञाओं का पालन करना मुश्किल लगता है, और हम बहाने बनाकर अपने आपको ठीक सिद्ध करने की कोशिश करते हैं।

बाइबल कहती है कि एक दूसरे की सह लो, और हम ऐसा नहीं करते। एक बार को बाहरी व्यक्ति की तो हम सह भी लेते हैं, परंतु परिवार के तथा कलीसिया के किसी भाई या बहन से हमारे खिलाफ हुई गलती को हम सहन और क्षमा नहीं कर पाते। बाइबल हमें बदला ना लेने के बारे में

सिखाती है पर हम कहीं न कहीं अपनी भड़ास निकाल ही लेते हैं, और कुछ नहीं तो चुगली ही कर लेते हैं। बाइबल कहती है कि क्रोध तो करो पर पाप मत करो, पर हम गुस्सा आने पर अपशब्दों का भी इस्तेमाल कर लेते हैं (चाहे बाद में प्रभु से क्षमा भी मांग लें)। बाइबल कहती है कि जब कोई एक गाल पर तमाचा मारे तो दूसरा आगे कर दें, पर अपनी गलती होने पर भी हम ऐसा नहीं कर पाते, सामने वाले की गलती होने पर तो बात ही कुछ और है, तब तो हम किसी तरह उसको उसकी गलती का अहसास कराना ही चाहते हैं। प्रभु यीशु ने कहीं किसी की बुराई नहीं की, पर हम दूसरों के पापों को ढांप नहीं पाते बल्कि खुले में उसका परिहास करते हैं। बाइबल कहती है कि कम विश्वासी को अपने से अलग ना करो बल्कि उसे मज़बूत करो, पर हम उसकी गलतियों को देखकर उससे दूर रहना ही बेहतर समझते हैं।

बहुत सी पापमय बातें जैसे गुस्सा, घमण्ड, व्यभिचार (वैचारिक अथवा शारीरिक), ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, गाली-गलौच, झगड़ा, झूठ तथा चोरी (छोटी या बड़ी – समय, ऑफिस सामग्री, दशमांश आदि) हमारे जीवन में बनी रहती है, जिसका प्रभाव यही होता है कि हमारे साथ काम करने वाले सहकर्मी, हमारे पड़ोस में रहने वाले लोग हमारी कमजोरियों को जानते हैं और जब हम प्रचार करते हैं, तो उनको हमारे जीवन में विरोधाभास नज़र आता है, और वे मसीह के पास नहीं आते। बहुत से लोग इसी कारण विरोध में खड़े हो जाते हैं।

2. **घृणा भाव से देखना** – आम हिंदू व्यक्ति के लिये सभी मार्ग ईश्वर की ओर जाते हैं, और इसलिये वह हरेक धर्म तथा उपासना पद्दति में विश्वास करता है। यह एक मुख्य कारण है कि वह अन्यान्य जगह पर पूजा अर्चना करता है, गंगा में डुबकी लगाकर अपने पाप क्षमा कराने का प्रयास करता है, मजारों पर जाकर चादर भी चढ़ाकर आ जाता है, ज़रूरत पड़े और कोई बताये तो किसी गुरू की शरण में भी जा सकता है। इसके पीछे उसके ईश्वर के प्रति श्रद्धा को हम नहीं देखते, परंतु उसके मूर्तिपूजा करने के कारण उससे घृणा भाव रखने लगते हैं।

हम इस बात को क्यों नहीं समझ सकते कि किसी भी धर्म में हम क्यों न पैदा हुए हों, हम भी अंधकार में जीवन बिता रहे थे और ईश्वर के विरोध में

बहुत से कार्य करते थे जो कि तब ही दूर हुई जब हम मसीह में विश्वास करने लगे। आज हमें सत्य की जानकारी है और सत्य ने हमें स्वतंत्र किया है (यूहन्ना 8:32), जिनके पास यह सत्य नहीं है, वे आज भी अंधकार में विचरण कर रहे हैं। हमें उनको राह दिखानी है, और यदि हम अंधे व्यक्ति पर दया करके उसे सही मार्ग ना दिखायें तो वो तो ठोकरें खाता ही रहेगा, अब हम इसपर उसका परिहास करें या उससे घृणा करें तो यह तो मसीही जीवन नहीं है।

बाइबल हमें सिखाती है कि हम अपने दुश्मनों से भी प्रेम करें, पर हम अपने पड़ोसी से भी प्रेम नहीं कर पाते क्योंकि वो मूर्तिपूजा करता है। मूर्तिपूजा करते हुए किसी को देख यह कह देना की वो शैतान का उपासक है या कभी नहीं बदलेगा, यीशु मसीह के प्रेम तथा ईश्वरत्व पर शक करने जैसा है।

बहुत से मसीही लोग उनके समारोहों में शरीक नहीं होते और इस प्रकार घनिष्ट संबंध नहीं बनाते। श्रद्धा के साथ लाये गये प्रसाद का इंकार तो बहुत से मसीही कर देते हैं और अपने आप को उनसे अलग साबित कर देते हैं, पर शायद ही कभी उनको अपना प्रसाद ना खाने का कारण बताते हैं, जिसके कारण एक द्वेष भावना पैदा होती है।

यही घृणा-भाव एक दूरी को जन्म देता है जिसके कारण कई बार विरोध भी खड़ा हो जाता है।

मसीही लोगों में धार्मिक सहिष्णुता होनी चाहिये, पर नहीं है। कहीं इसका कारण यह तो नहीं कि हम अपने आप को दूसरों से बेहतर समझने लगते हैं। परमेश्वर ने प्रेम करना सिखाया है वह तो बहुत ऊँचे स्तर का है, जिसमें हमें अपने को शून्य करना है, अपने को दास का स्थान देना है, दूसरों के अपने से अच्छा समझना है, अपने दुश्मनों पर भी परोपकार करना है, फिर धर्म के आधार पर ही दूसरों के तुच्छ समझने की इतनी बड़ी भूल क्यों।

3. **हिंदू धर्म का परिहास** - उनके ईश्वरों तथा देवी-देवताओं को गलत तरीकों से और अभद्र नामों से पुकारा जाता है। बहुत से लोग हिंदू देवी-देवताओं का

नाम सम्मान के साथ नहीं लेते। अगर हम उनमें विश्वास नहीं करते तो कोई बात नहीं, परंतु उनका अपमान करने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसा सुना गया है कि कई लोग उन्हे "शैतान" आदि शब्दों से सम्बोधित करते हैं जो कि उचित नहीं है।

बाइबल का नया नियम उठाकर पढ़िये और पता कीजिये कि कितनी बार प्रभु यीशु मसीह ने या उनके चेलों ने उस समय में प्रचलित धर्मों, उनके देवताओं और मानने वालों को अपमानजनक शब्दों से सम्बोधित किया है। मूर्ति-पूजा की भर्त्सना तो बाइबल ज़रूर करती है परंतु किसी भी देवी-देवता का नाम अपमानजनक तरीके से नहीं लेती है। तो फिर हमारा आधार क्या है? प्रभु यीशु ने यह कभी नहीं किया। पौलुस और पतरस ने ऐसा कभी नहीं किया। उनके समय में क्या मूर्तिपूजक नहीं थे या प्रकृति के मानने वाले नहीं थे, पर उन्होंने सिर्फ पाप-क्षमा, मोक्षदान तथा स्वर्ग के राज्य की शिक्षायें दीं।

बहुत सी ईसाई किताबें हिंदू धर्म की कमियाँ उजागर करने के लिये लिखी गई हैं। मैं सोचता हूँ कि ऐसी किताबें पढ़े लिखे वर्ग में एक द्वेष भावना पैदा करती है। यदि प्रभु यीशु हमें विरोध करना सिखाना चाहते तो वो बाइबल के नये नियम में ऐसी बहुत सी बातें हमें सिखा सकते थे, परंतु उन्होने अपने पकड़वाये जाने से पहले पतरस के एक सिपाही के कान काट देने पर यही कहा कि जो तलवार से लड़ेगा वह तलवार से ही मरेगा, अर्थात, जो विरोध करेगा वह विरोध से ही नाश हो जायेगा। हम में से बहुत से लोग इस बात को समझ नहीं पाये हैं और इसलिये विरोधी-प्रचार करते हैं।

दुःख की बात यह है कि हिंदू धर्म के विरोध में लिखने वाले कुछ ही लोग हैं पर उसका खामियाजा बहुत से प्रचारकों को उठाना पड़ता है। यह तरीका बाइबल आधारित नहीं है और हमें इससे दूर रहना चाहिये। हमारे कार्यकलापों, विचारों तथा वचनों का आधार परमेश्वर का वचन होना चाहिये।

मेरे विचार में हमें विरोध की मानसिकता से ऊपर उठकर, परमेश्वर के प्रेम का ही प्रचार करना चाहिये जो सारे पापों को ढांप सकता है (नीतिवचन 10:12) और क्योंकि प्रेम ही सर्वश्रेष्ट है (1 कुरिन्थियों 13:13)।

4. सामाजिक परिवेश में परिवर्तन - प्रभु यीशु में विश्वास करने वालों का नाम परिवर्तन और उनके जीवन की आम परिस्थितियों से उनको हटाकर, समाज और परिवार से अलग कर देना वो बातें हैं, जिनके कारण जनसमाज में विरोध पैदा होता है।

बहुत से लोग अपने उन त्योंहारों को मनाना छोड़ देते हैं, जिसमें वे पहले बढ़ चढ़कर भाग लेते थे, जिससे वे अपने अन्य परिजनों तथा समाज से कट जाते हैं। कुछ लोग अपना नाम परिवर्तन कर लेते हैं, जिससे बाकी समाज उनसे रिश्तेदारियाँ और संबंध खत्म कर लेते हैं, कई लोगों का तो अपने पुराने रिश्तेदारों के यहाँ आना-जाना ही बंद हो जाता है। ऐसा करने से आप क्या उन लोगों में कभी परमेश्वर के प्रेम बाँट सकते हैं? अगर नहीं, तो फिर ऐसा क्यों करें?

अपने से बड़ों के पैर छूकर उनका आदर करना, आदरवश घर की बहू का सिर ढकना (घूंघट तथा पर्दा व्यवस्था नहीं, जो कि एक रूढ़ीवादी बात है), कुछ खास आभूषणों को पहनना इत्यादि कुछ ऐसी बातें हैं, जिनके करने से मसीही जीवन पर कोई फर्क नहीं पड़ता, परंतु बहुत से पासबान और अगुवे इस बात की खिलाफत करते हैं, और इनके लिये नये विश्वासियों को मना करते हैं, जिससे वे सांस्कृतिक तौर पर इन नये विश्वासियों को समाज से तोड़ देते हैं। चूड़ीयों के पहनने अथवा ना पहनने से मसीही विश्वास पर कोई फर्क नहीं पड़ता, परंतु कुछ उन्हें तुड़वाते हैं, या पहनने को मना करते हैं, जिससे समाज से लोग कट जाते हैं, या उन्हें अनावश्यक ही इन बातों का जवाब देना पड़ता है, जिससे विरोध उत्पन्न हो जाता है।

कई लोग शादी-ब्याह, जन्मदिन समारोह तथा मृत्यु के पश्चात होने वाले क्रियाकर्म के आधार पर अपने आपको अपने समाज से अलग कर लेते हैं। कई लोग विरोध सहने तक को तैयार होते हैं (जिसमें कोई बुराई नहीं है), पर गलत आधार पर खड़े रहते हैं और अन्ततः अपने लिये तथा आगे के लिये अपने समाज में मसीह के प्रचार के लिये एक दीवार खड़ी कर लेते हैं।

पुराने समय में (अंग्रेजी शासनकाल में) ईसाईयों के लिये अलग मोहल्ले बना दिये गये। इसमें पुराने ईसाई और नये विश्वासी साथ रहने लगे और अपने पुराने रीतिरिवाजों तथा संबंधियों से दूर हो गये। प्रत्यक्ष तौर पर तो यह आसान था, ईसाई प्रचारकों के लिये इसलिये ताकि कुछ अनुयायी मिलें, और नये विश्वासियों के लिये, ताकि उन्हें किसी प्रकार का सताव न हो, और वे अपने समाज से ऊँचा ओहदा पाकर मिशन अस्पतालों तथा स्कूलों में नौकरी पा सकें और अंग्रेजी तरीके से अपना जीवन यापन कर सकें, पर इससे जिस जाति और समाज से वे उठे थे, वे हमेशा के लिये ईसाई समाज से अलग हो गये, और उनके रीतिरिवाज, जीवन जीने का ढंग तथा कार्यकलाप सब बदल गये। उनके बीच में किसी प्रकार का कोई संबंध नहीं रहा, और उनमें से बहुत जिन्होंने सच्चे सुसमाचार का पालन नहीं किया, उनके जीवन के कारण वैसे भी कइयों ने ठोकर खाई।

मेरा सुझाव है कि आप चाहे प्रचारक हों या हिंदू धर्म से मसीही विश्वास में आये प्रभु यीशु के चेले, बहुत सी ऐसी सांस्कृतिक बातें हैं, जिनको करना गलत नहीं है, परंतु हमें वह बारीक रेखा खींचनी होगी कि हम क्या कर सकते हैं, और क्या नहीं। ऐसा करने से पहले हमें उस क्षैत्र विशेष के रीतिरिवाज, संस्कारों आदि का पूरा ज्ञान प्राप्त करना चाहिये, ताकि किसी प्रकार का विरोध न हो।

5. प्रेम का अभाव – यह एक छोटी सी बात नज़र आती है, परंतु सच्चाई यह है कि यह एक बहुत बड़ा कारण है कि हम आत्माओं को मसीह के लिये नहीं जीत पाते बल्कि उनको अपना विरोधी बना लेते हैं।

हम में से बहुत से लोग तो हिंदू व्यक्ति को सुसमाचार इसलिये बताते हैं क्योंकि मसीही होने के नाते यह उनकी जिम्मेदारी अथवा कर्तव्य है, या फिर इसलिये क्योंकि वह उन्हें बहुत बड़ा पापी नज़र आता है जिसे वो सबकुछ नहीं करना चाहिये जो वो अभी करता है। धार्मिक अथवा कार्मिक रूप से उसे अपने जैसा बना लेने के लिये कई लोग सुसमाचार बताते हैं, जिसमें प्रेम का स्थान नहीं है।

मैं सांसारिक रूप से कम्प्यूटर के पेशे से जुड़ा हूँ, और मैं अपनी नौकरी पूरी कर्तव्यनिष्ठा से करने का प्रयास करता हूँ, परंतु मैं ऐसा अपनी नौकरी से, अपने अधिकारियों से या अपने सहकर्मियों से किसी प्रेम के वशीभूत होकर नहीं करता। ठीक उसी प्रकार बहुत से ऐसे विश्वासी जो अपना मुँह सुसमाचार बताने के लिये खोलते हैं वो इसलिये ताकि मत्ती 28 में दी गई महान आज्ञा को पूरा करें, परंतु उनमें सामने वाले व्यक्ति के प्रति प्रेम या दया हो ऐसा ज़रूरी नहीं है। उसके नाश होने के चिंता के कारण उसे सुसमाचार नहीं बताया गया, और इस प्रेम की कमी के कारण वो इसे ग्रहण करे या ना करे, उस बात की भी उन्हें कोई चिन्ता नहीं होती। ऐसा प्रचार धर्म की तूंती बजाने जैसा है, जो अन्ततः विरोध को पैदा करता है।

हममें से कुछ ऐसे भी हैं जो सच में नाश हो रही आत्माओं को बचाने का बोझ रखते हैं, और इसलिये ही सुसमाचार सुनाते हैं, परंतु प्रेम की कमी फिर भी उन्हें उनके साथ आत्मीय संबंध बनाने से वंचित करती है। और मैं मानता हूँ कि किसी भी धर्म अथवा पंथ से ज्यादा, इंसान प्रेम का भूखा होता है। यदि आप उसे प्रेम दिखायें तो स्वतः ही वह आपकी मत का अनुसरण करने लगेगा। बहुत से लोग सुसमाचार को इसलिये ग्रहण नहीं करते क्योंकि वह उनके दोस्त अथवा प्रियजन से उनके पास नहीं पहुँचा है, और पराया व्यक्ति कुछ भी बोले, उससे उन्हें कोई मतलब नहीं है।

अपने आप को जाँचें कि मसीही होने के बाद से आपने सच में कितने हिंदू दोस्त बनाये हैं। क्या सच में आप उनसे प्रेम करते हैं? क्या आप अपने उन सहकर्मियों को जो मसीही नहीं है, अपने घर पर बुलाते हैं, उनके साथ समय व्यतीत करते हैं, उनके सुख-दुख में शामिल होते हैं? हम उनको चर्च में तो बुलाते हैं, बड़े दिन इत्यादि के समारोहों में भी, पर रोजाना के जीवन में उन्हें स्थान नहीं देते, क्या आप सोचते हैं, मसीह ने ऐसा प्रचार किया था या ऐसा प्रेम दिखाया था? यदि हममें प्रेम नहीं है तो उनके लिये हमारा बताया सुसमाचार झनझनाती झांझ और ठनठनाता पीतल ही है (1 कुरिन्थियों 13:1-3)।

इनके अलावा और भी बहुत सी बातें हो सकती हैं, जिनके कारण विरोध होता है तथा मसीहियों पर सताव आता है। वस्तुतः यह तब होता है जब हमारे मसीही जीवन में खामियां होती है या हम प्रचार में किसी प्रकार की गलतियाँ करते हैं।

राजनैतिक और अन्य कारणों से भी बार बार मसीहियों पर सताव आता है, परंतु उनकी विवेचना इस किताब का विषय नहीं है। उसके विषय में हम प्रार्थना करें ताकि प्रभु ऐसी बातों को अपने नियंत्रण में रखें।

इस विषय में क्या प्रार्थना करें

यदि आप प्रभु यीशु मसीह के सच्चे चेले हैं, तो आप इस बात को ज़रूर समझते होंगे कि सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण बात है – प्रार्थना करना। जी हाँ, हम कई तरह की प्रार्थनाएं करते हैं, परंतु यदि हम अपने हिंदू भाई-बहनों तक ईश्वर के प्रेम की सच्चाई को पहुँचाना चाहते हैं तो हमें उनसे प्रेम करना होगा और उनके लिये आँसू बहाकर भी प्रार्थना करना होगा। मैं यहाँ आपको बताना चाहता हूँ कि किन बातों के लिये आप प्रार्थना करें ताकि परमेश्वर का पवित्र आत्मा उन आत्माओं को तैयार करे (और आपको भी अपनी सामर्थ और अभिषेक से तैयारी दे) जिनको बचाने के लिये परमेश्वर आपको इस्तेमाल करना चाहता है।

निम्न बातों को ध्यान में रखकर आप प्रार्थना कर सकते हैं:

1. हमारा जीवन सच में उदाहरणीय हो (यूह. 17:11,17, कुलु. 1:10-11)
प्रभु यीशु ने मत्ती 5:20 में कहा कि हमारी धार्मिकता (पवित्रता) फरीसियों से बढ़कर होनी ज़रूरी है, अर्थात परमेश्वर के वचन और उसकी आज्ञापालन में हमें एक उदाहरण बनना है ताकि विधर्मी, अधर्मी तथा धर्मी सभी हमें देखें और परमेश्वर पिता की महिमा करें। हम अपनी धार्मिकता में नहीं जीते क्योंकि अपनी सामर्थ में हम असफल हो जाते हैं, इसलिये हमें प्रभु यीशु की धार्मिकता को ओढ़ना है और परमेश्वर के वचन के द्वारा विश्वास का जीवन जीना है। इसके लिये हमें बहुत प्रार्थना की आवश्यकता है।

2. लोग सत्य के भूखे-प्यासे हो जायें (2 कुरि. 4:3-4, मत्ती 13:15)

हमें इस बात की प्रार्थना करने की आवश्यकता है कि लोग सत्य को जानने के लिये लालायित हो जायें। एक भूखे आदमी को रोटी खिलाना आसाना है क्योंकि वो स्वयं भी तृप्त होना चाहता है। हम किस धर्म में पैदा होते हैं इसमें न तो हमारा कोई योगदान नहीं होता है और न ही कोई नियंत्रण, इसलिये उससे हमें कोई न तो लाग-लपेट होनी चाहिये और न ही कोई विरोध। पर जन्म से उस धर्म के कामों को करते हुए लोग स्वतः ही उसके अवलम्बी हो जाते हैं और उस धर्म की उन बातों को भी आँखें बंद करके स्वीकार करते रहते हैं जो कि तर्कसम्मत नहीं होती हैं। हमें इस बात के लिये प्रभु के सामने विनती करनी है कि प्रभु उनकी आत्मिक आँखों को खोले (2 कुरि. 3:14-16, इफि. 1:18) ताकि वे अपनी धर्मांधता व रूढ़ीवाद को छोड़कर, ईश्वरीय सत्य के और आत्मिक मुक्ति के भूखे-प्यासे हो जायें।

3. प्रभु लोगों के दिलों को अपने पवित्र आत्मा के द्वारा सुसमाचार को ग्रहण करने के लिये तैयार करें (लूका 8:5-12, 1 तिमु. 2:25)

इस बात के लिये भी प्रार्थना करना ज़रूरी है कि जब सुसमाचार सुनाया जाये तो सुनने वाला उसको ग्रहण करें क्योंकि जैसा मैंने पहले भी कहा है कि हम घोड़े को पानी के हौज तक तो ला सकते हैं पर उसे पीने के लिये बाध्य नहीं कर सकते। यह प्रभु का काम है। हम प्रार्थना करें कि वे लोग जो सत्य से अनजान थे और आत्मिक रूप से भटके हुए थे, वे सुसमाचार के सुनाये जाने पर अपने पाप के प्रति घृणा का स्वभाव पायें (जैसा ईश्वर पाप को देखता है - यूहन्ना 16:8) और पवित्र आत्मा ही उनको मन फिराने तथा यीशु मसीह पर विश्वास करने तथा उसका अंगीकार करने (रोमियों 10:10) के लिये तैयार करे क्योंकि पवित्र आत्मा के बिना कोई नहीं कह सकता कि यीशु मसीह प्रभु है (1 कुरिन्थियों 12:3)।

4. हम स्वयं भी प्राण देने तक विश्वासयोग्य बने रहें (1 पत.4:12-19)

हमें प्रभु की सामर्थ और पवित्र आत्मा की अगुवाई (प्रेरितों के काम 1:8) में ही सुसमाचार प्रचार करना है। हम कुछ गलत नहीं कर रहे बल्कि जीवित परमेश्वर के प्रेम के बारे में लोगों को बता रहे हैं क्योंकि हमारे मनों में उनके लिये प्रेम है और इस बात की करूणा है कि वो नर्क में नाश न हो जायें,

परंतु फिर भी, जो इस बात को नहीं समझते, वे आप पर सताव लायेंगे। प्रभु यीशु ने कहा कि यदि उनको सताया गया तो हम पर भी सताव आयेगा। हमें ऐसे में भी प्रेम करना है और किसी प्रकार की घृणा को अपने जीवन में स्थान नहीं देना है। यदि हम सताव के कारण अपने खोये हुए भाई-बहनों से प्रेम करना बंद कर दें, तो शैतान अपने काम में सफल हो गया। हमें तो जीवनपर्यंत विश्वासयोग्य बनें रहना है (मत्ती 24:9-14)। हमें अपने लिये भी इन सब विषयों के साथ प्रार्थना करने की आवश्यकता है।

5. सुसमाचार प्रचार के मार्ग खुले रहें

इस विषय के लिये हमें बहुत प्रार्थना करना चाहिये क्योंकि समय बदल रहा है। आज सड़कों और मोहल्लों में चौराहों पर खड़े होकर प्रचार करना मुश्किल हो गया है। प्रचार सामग्री का खुले आम बाँटना धर्म के प्रपंच की तरह देखा जाता है और हरेक राज्य में धर्म-परिवर्तन के विरुद्ध कानून आ गये हैं जिनका दुरूपयोग मसीहियों के खिलाफ भी किया जाता है जो कि न तो लालच से, ना ज़ोर-जबरदस्ती से किसी का धर्म परिवर्तन करते हैं बल्कि वो तो अपने जीवन की साक्षी देते हैं और ईश्वर के प्रेम का प्रचार करते हैं जो असल में हमारे संवैधानिक मौलिक अधिकारों में से एक है।

बदलते समय के साथ परमेश्वर नये नये मार्ग खोल रहा है और खोल सकता है यदि हम निरंतर प्रार्थना करते रहें।

परमेश्वर का काम कभी रुक नहीं सकता। हमें प्रार्थना की आवश्यकता है। अपने देश के अधिकारियों के लिये प्रार्थना करें। उन सभी व्यक्तियों के लिये भी प्रार्थना करें जो सुसमाचार प्रचार के मार्ग में कंटक का काम करते हैं ताकि परमेश्वर उनका भी मन तथा जीवन परिवर्तन करे और उनको भी अपने प्रेम तथा उद्धार से सरोबार करे।

6. परमेश्वर की निश्चित योजना को जानने तथा व्यक्ति/समाज विशेष के लिये आपको इस्तेमाल करने के लिये

परमेश्वर के काम करने के तरीके बड़े अद्भुत होते हैं। वो हममें से हरेक के बारे में हमारी भलाई की योजना बनाता है (यिर्मियाह 29:11)। जब तक हम विश्वास करके पश्चाता और अंगीकार करके उद्धार नहीं पा लेते तब तक हमारे

उद्धार की योजना और फिर हमें अपनी महिमा के लिये इस्तेमाल करने की योजना ताकि हमारे द्वारा अन्य लोगों को बचाया जाये। उसने हमारे लिये वे व्यक्ति और समाज (जाति विशेष) नियुक्त किया है जिसमें से हमें आत्मायें जीतनी हैं। मुख्यतः परमेश्वर हमारे परिवार में, संपूर्ण घराने में, हमारे जाति तथा समाज में हमें ही इस्तेमाल करता है क्योंकि उसके संस्कारों को, उसकी अच्छाई और बुराइयों को हम बहुत गहराई से जानते हैं। मैं हिंदू परिवार में पैदा हुआ इसलिये मेरे लिये एक हिंदू व्यक्ति से बात करना आसान है परंतु जब मैं एक सिंधी अथवा मुस्लिम व्यक्ति से बात करूँ तो बहुत सी बातों से मैं अनजान रहता हूँ और उन विषयों पर मैं बात नहीं कर सकता और न ही उनके प्रश्नों के सटीक जवाब दे सकता हूँ।

अपने लोगों के लिये प्रार्थना करें। परमेश्वर से मांगे कि वो उनके बीच में आपको ज्योति की गवाही बनाकर खड़ा करे और उस पूरे घराने (परिवार तथा समाज) का उद्धार करें। हालांकि परमेश्वर की योजना आपको किसी दूसरे धर्म, भाषा तथा समाज के लिये भी हो सकती है, इसलिये प्रार्थनाओं के द्वारा परमेश्वर की सिद्ध इच्छा जानना ही सर्वोत्तम विकल्प है।

आप अपने चारों और नज़रें दौड़ाइये और देखिये कि परमेश्वर ने आपको किनके बीच में से उठाया है कि आप वहाँ सुसमाचार लेकर जायें। परमेश्वर का वायदा है कि यदि हम विश्वास करें (और फिर उसकी मुनादी भी) तो न सिर्फ हम बल्कि हमारा परिवार, घराना, जातिभाई और समाज के लोग भी उद्धार पायेंगे (प्रेरितों के काम 16:31)।

5

गवाही और सुसमाचार प्रचार सेवा

मैं अपने आप को इस योग्य नहीं समझता कि यह बताऊँ कि सेवा किसे कहते हैं, और न ही इस प्रकार का कोई प्रयास मैं यहाँ कर रहा हूँ। मैं यहाँ अपने जीवन की गवाहियों तथा प्रभु द्वारा मुझे समझाई गई बातों का वर्णन करना चाहता हूँ जिससे कि नये विश्वासी और प्रचारक उन बातों से लाभ उठा सकें और प्रभु की सेवा में बढ़ सकें। अपनी कुछ गवाहियाँ मैंने इस पाठ में लिखी हैं ताकि आप देख सकें कि परमेश्वर कैसे हम जैसे अनुपयक्त तथा निकम्मे लोगों को अपनी महिमा के लिये इस्तेमाल कर सकता है। वह सिर्फ इतना चाहता है कि हम उसकी बुलाहट को सुनें और उसकी मर्जी पर चलें। यह ज़रूरी नहीं है कि इस दुनिया में आप बड़े नामचीन व्यक्ति हों। हम दुनियावी दृष्टि से नगण्य हो सकते हैं परंतु परमेश्वर हमसे सेवा लेने में खुश होता है।

गवाही तथा सुसमाचार प्रचार

सर्वप्रथम तो मैं इन दोनों बातों में अंतर बताने की कोशिश करता हूँ, जैसा कि मैं समझता हूँ। मेरे विचार में समाज में अपने परमेश्वर के (तथा अपने

जीवन में हुए आत्मिक परिवर्तन के) गवाह होना एक बात है और जगह जगह जाकर सुसमाचार प्रचार करना अलग। सभी विश्वासी प्रचारक, भविष्यवक्ता, पासबान या शिक्षक होने के लिये नहीं बुलाये गये हैं (इफिसियों 4:11) अपितु परमेश्वर का पवित्र आत्मा जैसे चाहता है वैसे अलग अलग लोगों को यह सेवा देता है।

जी हाँ, सभी लोग सेवक होने के लिये नहीं बुलाये गये हैं, परंतु सभी लोग परमेश्वर के तथा उसके राज्य के गवाह होने के लिये ज़रूर बुलाये गये हैं। सभी विश्वासियों को पवित्र आत्मा दिया गया है जिन्होंने अपने पापों से पश्चाताप कर प्रभु यीशु मसीह को अपने जीवन का स्वामी होने के लिये आमंत्रित किया है और सावर्जनिक रूप से उसे अपना उद्धारकर्ता मान लिया है ताकि बाकि का जीवन उसकी आज्ञाकारिता में बितायें। जिनको भी पवित्र आत्मा दिया गया है वो इसलिये कि हम जगत के छोर तक प्रभु यीशु के गवाह हो जायें (प्रेरितों के काम 1:8).

मैं इस बात की व्याख्या नहीं करना चाहता कि पवित्र आत्मा के हमारे अंदर वास करने, उसकी भरपूरी होने तथा पवित्र आत्मा में भर जाने में क्या अंतर है, और न ही मैं उसके आत्मिक वरदानों के रूप में तथा शारीरिक प्रकटन (प्रकाशन) की विवेचना करना चाहता हूँ, परंतु यह बात सत्य है कि जो भी परमेश्वर से सामर्थ पाना चाहे, उसकी उपस्थिति की भरपूरी को महसूस करना चाहे और परमेश्वर के साथ आत्मिक रस का आनंद लेना चाहे उसे आत्मिक वरदानों की धुन में ज़रूर रहना चाहिये (1 कुरिन्थियो 14: 1-20)। व्यक्तिगत रूप से मैं अन्य भाषा में प्रार्थना करता हूँ और इसमें पूर्ण रूप से विश्वास करता हूँ। मेरे विचार में हम में से किसी को भी, खासतौर पर वे, जो सेवा में अपने आपको प्रभु के लिये समर्पित कर देना चाहते हैं (या कर दिया है), इन बातों से अनजान नहीं रहना चाहिये (1 कुरिन्थियों 1:1-11)। हरेक विश्वासी को इस बात की लगन होनी चाहिये कि वह व्यक्तिगत रूप से परमेश्वर के साथ नज़दीकी संबंध स्थापित करे और यह भी की उसके राज्य की बढ़ौतरी के लिये प्रार्थना में रहे और अपना योगदान अवश्य दे।

मैं सोचता हूँ कि सुसमाचार प्रचार तथा सभी अन्य सेवाओं का दायरा (कार्यक्षेत्र) बहुत बड़ा होता है, जबकि साक्षी (गवाही) का तुलनात्मक रूप से छोटा। मसीह की साक्षी देने वाला अपने जीवन, व्यवहार तथा शब्दों के द्वारा अपने मित्रों के बीच में, परिवारजनों में, रिश्तेदारों में, सहकर्मियों तथा सहपाठियों में उस बात का वर्णन करता है जो परमेश्वर ने उसके जीवन में किये जिनके कारण उसका संपूर्ण जीवन बदल गया। वो उन आशीषों का भी वर्णन करता है जो प्रार्थनाओं के उत्तर के फलस्वरूप उसे मिली।

मैंने इसी बात का प्रयास किया है कि पूरी विश्वासयोग्यता के साथ मैं मसीह का साक्षी बना रहूँ और इसी प्रकार अपने नज़दीकी लोगों को मसीह में जीत लूँ।

मेरी समझ में, गवाही देने के बाद अगला कदम सेवा के रूप में आता है। हालाँकि दोनों ही बातों का आधार एक ही होता है – सुसमाचार बाँटने की इच्छा रखना ताकि स्वर्ग/परमेश्वर का राज्य पृथ्वी पर आ जाये, तौभी दोनों के कार्यक्षेत्र, उत्साह, नम्रता-दीनता तथा अभिषेक में अंतर हो सकता है। सेवक में एक गवाह की तुलना में इन सभी कारकों की अधिकता होना अवश्य है। सेवा में उद्धार के कार्य के पूरे होने की संपूर्ण जिम्मेदारी सेवक की होती है जिसमें सुसमाचार का बताना, आत्माओं को जीतना, उनको चेला बनाना और वो सब बातें मानना सिखाना जो प्रभु के वचन से हम तक पहुँची हैं, और फिर कलीसिया का भाग बनाकर उसे दृढ. करना इत्यादि सब कुछ शामिल होता है। सेवक बनना मुश्किल काम है। यूँ तो हरेक विश्वासी को नम्र और दीन होना ज़रूरी है परंतु सेवक को अपने चेलों के (और जो अभी चेले नहीं भी है) उनके पैर धोने तक के लिये तैयार होना चाहिये, कष्ट तथा अपमान सहने के लिये भी तैयार होना चाहिये और मृत्युपर्यंत प्रभु के प्रति विश्वासयोग्य बने रहने के लिये तैयार होना चाहिये।

मुझमें कोई ऐसी काबिलियत नहीं कि मैं अपने आपको मसीह का प्रचारक समझूँ। मैं अपने आप को सेवक नहीं अपितु गवाह ही मानता हूँ, तौभी मैं मसीह की और उसके लोगों की सेवा करता हूँ और करते रहना चाहता हूँ। सभी लोगों को मसीह का सुसमाचार सुनाने की तथा उन्हें मसीह की देह का

भाग बनाकर उन्हें मज़बूत करने की तीव्र इच्छा मुझे सेवा की ओर खींचती रहती है। मेरा सोचना है कि जो सेवक बनना चाहे उसमें ऊपर बताये सारे गुणों का होना अत्यंत आवश्यक है और तीव्र इच्छा, समझ, पवित्रता तथा जोश का समन्वय होना भी बहुत ज़रूरी है। सच्चे सेवक में क्या गुण होने चाहिये इसके बारे में विस्तार से आप अगले अध्याय में पढ़ सकते हैं।

फिर भी मैं मानता हूँ कि सिर्फ उत्साहित करके या भावनाओं को उद्वेलित करके किसी को पाप-क्षमा की प्रार्थना भर करा देना काफी नहीं है। क्योंकि इसके बाद विश्वास में मज़बूत नहीं होने पर ऐसे व्यक्ति के गिरने की आशंका बनी रहती है। यदि हम आधा काम कर करके छोड़ते रहें तो संभव है कि हम एक बहुत बड़ी गलती कर बैठें और वो यह है कि हम मसीह के बजाय शैतान का राज्य मज़बूत कर दें। किसी भी व्यक्ति को मसीही विश्वास में लाने के बाद उसे जयवंत जीवन जीने के सिद्धान्त बताना और उनको लागू करना सिखाना अत्यंत आवश्यक है जिनके बिना शैतान ऐसे लोगों को फिर अपने पाश में फंसा सकता है।

इसका मतलब यह नहीं है कि मैं ट्रेक्ट बाँटने, सुसमाचार सभाओं और दूसरे सब तरीकों का विरोधी हूँ। नहीं। बल्कि यह कि इन तरीकों से आत्माओं को जीतने के तुरंत बाद उनको किसी स्थानीय कलीसिया से संबद्ध कर दें ताकि वो वचन की शिक्षा पाये और अपना जीवन पवित्र आत्मा और परमेश्वर के वचन के द्वारा जीना सीखे, क्योंकि जब उन्होंने मसीह में विश्वास किया, तो नया जन्म पाया है और अभी आत्मिक तौर पर शिशु ही हैं और उन्हें सार-संभाल, प्रेम तथा शिक्षा की आवश्यकता है, ताकि वो बढ़ें और मसीह के पूरे डील-डौल तक बढ़ जायें (इफिसियों 3:16-19।

परमेश्वर का आत्मा निरंतर कार्यरत है और सभी आत्माओं को बचाने के लिये कार्य करता है, परंतु हम में से हरेक को स्वतंत्र इच्छा दी गई है जिसका दुरुपयोग कर बहुत से लो पवित्र आत्मा की आवाज को नहीं सुनते या सुनकर भी अपनी इच्छा करते हैं और परमेश्वर से दूर हो जाते हैं। विश्वास में पीछे हट जाने वाले लोगों में मुख्यतया उन ही लोगों का शुमार होता है जो विश्वास में मज़बूत नहीं हुए या जिन्हें वचन की सही खुराक नहीं

मिली और जिनकी आत्मा पाप में, परीक्षाओं में या लालच में पड़कर परमेश्वर से दूर हो गई।

यदि जिस व्यक्ति से हम बात कर रहे हों, उसके साथ हमें दोबारा मिलने की संभावना ना भी हो या हमारे पास समय कम भी हो तो भी मैं कोशिश करता हूँ कि जो यीशु मसीह में विश्वास करना चाहे उसे में उद्धार के आश्वासन (आत्मिक आशा), प्रतिदिन पश्चाताप तथा विश्वास का जीवन जीने (आत्मिक शुद्धी), परमेश्वर से रोज प्रार्थना करने (आत्मिक सांस), उसका वचन पढ़ने (आत्मिक रोटी) तथा नियमित संगति (आत्मिक समाज) करने के बारे में स्पष्ट रीति से बताऊँ ताकि वह व्यक्ति पवित्र आत्मा की सामर्थ में मसीह के साथ जयवंत जीवन जी सके।

***

गवाही तथा सुसमाचार – कुछ गहराई की बातें

बाइबल हमें महान आज्ञा देती है, जो कि अपने आप में बहुत बड़ी चुनौती तथा साथ ही हमें नम्र करने वाला अनुभव है जिसमें हम परमेश्वर के सहभागी और सहकर्मी होकर खोई तथा भटकी हुई आत्माओं को प्रभु के पास लाते हैं।

"यीशु ने उनके पास आकर कहा, "स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार मुझे दिया गया है। इसलिये तुम जाओ, सब जातियों के लोगों को चेला बनाओ; और उन्हें पिता, और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से बपतिस्मा दो, और उन्हें सब बातें जो मैं ने तुम्हें आज्ञा दी है, मानना सिखाओ: और देखो, मैं जगत के अंत तक सदा तुम्हारे संग हूँ।""

[मत्ती 28:18-20]

प्रभु यीशु मसीह ने हमें आश्वासन दिया है कि स्वर्ग और पृथ्वी पर सारा अधिकार उन्हीं का है और जिस उद्देश्य से वो हमें इस दुनिया में भेज रहे हैं, स्वयं वह भी इसी उद्देश्य से पृथ्वी पर आये और लूका रचित सुसमाचार (19:10) में स्पष्ट तौर पर इस बात का उल्लेख किया गया है -

"... मनुष्य का पुत्र खोए हुओं को ढूंढने और उनका उद्धार करने आया है।"
यूहन्ना 20:21, में प्रभु यीशु ने अपनी आज्ञा देते हुए कहा है -

"यीशु ने फिर उनसे कहा, "तुम्हें शांति मिले; जैसे पिता ने मुझे भेजा है, वैसे ही मैं भी तुम्हें भेजता हूँ।"

परमेश्वर के पवित्र आत्मा ने मुझे यह सिखाया और इसकी छाप मेरे दिल में लगा दी है, इसलिये बड़े उत्साह तथा आनंद से मैं इस कार्य में सलग्न हूँ। मैंने सीखा है कि प्रभु के गवाह होने का काम हम अपनी सामर्थ में नहीं कर सकते (यूहन्ना 15:5) इसलिये उसने हमें अपना पवित्र आत्मा दिया है।

"परंतु जब पवित्र आत्मा तुम पर आएगा तब तुम सामर्थ पाओगे; और यरूशलेम और सारे यहूदिया और सामरिया में, और पृथ्वी की छोर तक मेरे गवाह होगे।"

[प्रेरितों के काम 1:8]

मैं समझता हूँ कि सेवकाई का अर्थ नायक या नेता बना जाना नहीं है अपितु सेवक बन जाना है (मत्ती 20:28, मरकुस 10:45) जैसा कि प्रभु यीशु ने सिखाया। यह ईश्वर के लिये कुछ करने का नहीं बल्कि जीवन जीने का एक तरीका है।

हमारे लिये ज़रूरी है कि हर संभव मौके पर हम सब प्रभु के गवाह हों – यह कोई इच्छा की बात नहीं है बल्कि परमेश्वर की अपने हरेक चेले के लिये आज्ञा है। जैसा मैंने पहले बताया कि सुसमाचार प्रचार तथा अन्य सेवा शायद सबके लिये न हों परंतु परमेश्वर के प्रेम की गवाही देना हरेक विश्वासी का कर्तव्य है क्योंकि हरेक वो व्यक्ति जो प्रभु यीशु में विश्वास करता है उसके जीवन में गवाही अवश्य ही होती है (1 यूहन्ना 5:10) और हमें अपने विश्वास तथा आशा के बारे में सबको बताने के लिये सदैव तैयार रहना है (1 पतरस 3:15)।

कई बार कई लोग इस संशय में रहते हैं कि यह सभी आज्ञायें तो प्रभु ने अपने 12 चेलों को दी थी और यह हमारे लिये नहीं है। ऐसा सोचना गलत

है क्योंकि हम सभी जो प्रभु यीशु में विश्वास करते हैं और उनकी आज्ञाओं में जीवन बिताते हैं वे सब उनके चेले हैं। इसलिये यह आज्ञा हम सबके लिये है। कई लोग अपने आप को चेला नहीं अपितु विश्वासी मानते हैं। प्रभु यीशु ने कहीं नहीं बताया कि हमें उसका विश्वासी बनना है, अपितु यह कि हमें उसका चेला बनना है। एक विश्वासी सिर्फ विश्वास करके अपने तरीके से जीवन बिता सकता है परंतु एक चेला अपने गुरू पर संपूर्ण विश्वास तो करता ही है, वह उसको अपना जीवन भी अर्पण करता है और उसकी आज्ञाओं का पालन भी करता है। तो आप स्वयं निर्णय लीजिये कि क्या आप चेले नहीं है और अगर हैं तो क्या है जो आपको प्रभु यीशु की सेवा में लग जाने से रोकता है।

प्रभु यीशु दुनिया की सभी आत्माओं को बचाना चाहते हैं और इसलिये उन्होंने हमारा आव्हान किया है कि हम जाति जाति के लोगों को चेला बनायें। हमें भी एक दिन सुसमाचार सुनाया गया, चेला बनाया गया और परमेश्वर की वो सभी बातें (आज्ञायें) मानना सिखाई गईं जो प्रभु यीशु ने अपने चेलों को सिखाईं थी। तभी हमनें भी प्रभु यीशु की मृत्यु तथा पुनर्त्थान की समानता में बपतिस्मा लिया।

मत्ती के 28वें अध्याय और 19 तथा 20 आयत में दी गई महान आज्ञा प्रभु यीशु के हरेक विश्वासी भक्त का सौभाग्य है कि हम परमेश्वर द्वारा रचित इस मानव जाति की आत्माओं के उद्धार के महान कार्य में हम सहभागी हो सकें। धर्म, क्षैत्र तथा भाषा की कोई भी सीमा हमें दुनिया के कोने कोने में फैली अलग अलग जातियों को सुसमाचार पहुँचा सकें।

मेरा मानना है कि सेवकाई को हमें सिर्फ 'बाहर जाने' (सुसमाचार के प्रचार हेतु) के मंतव्य से नहीं समझना चाहिये अपितु उसे परमेश्वर के साथ 'अंदर जाने' के अर्थ में भी समझना चाहिये। हममें से कई लोग या तो बाहर ही रहते हैं, पर्चे बाँटते हैं, बाईबल अध्ययन कराते हैं, प्रार्थना-सभाओं में जाते हैं, गवाही देते हैं और बहुत से कामों में व्यस्त रहते हैं परंतु परमेश्वर के साथ व्यक्तिगत आत्मिक समय व्यतीत नहीं करते हैं या फिर कुछ ऐसे हैं जो अपने उद्धार से संतुष्ट होकर बैठ जाते हैं और बिल्कुल भी बाहर नहीं

जाते हैं ताकि अपनी गवाही से आत्माओं को प्रभु के राज्य की ओर फेर सकें। हमें इन दोनों ही बातों में संतुलन बिठाने की आवश्यकता है।

परमेश्वर ने हमें UAE (संयुक्त अरब अमीरात – देश) में लाकर इस बात को बड़ी गहराई से समझाया। इस नये देश में आकर हमारी सभी गतिविधियाँ रूक गईं जो हम दिल्ली में कर रहे थे जिनके कारण हमारी प्रभु के साथ आत्मिक संगति कम हो गई थीं।

भाई जैक पुनन की एक पुस्तक पढ़ते हुए मुझे एक बड़ी अद्भुत बात सीखने को मिली। उन्होने उत्पत्ति के अध्याय में दिये जगत की सृष्टि के वाकये के बारे में समझाते हुए लिखा है कि परमेश्वर ने पहले छः दिन सृष्टि का निर्माण किया और सातवें दिन आराम किया, परंतु आदम की सृष्टि छटवें दिन हुई इसलिये पहला दिन उसके लिये आराम का ठहरा और फिर उसने काम शुरु किया। परमेश्वर इसलिये हमें अपने विश्राम में प्रवेश करने का (इब्रानियों 4:1-11) अर्थात उस पर विश्वास करने तथा उसके साथ संगति करने के लिये बुलाता है। परमेश्वर के साथ अपने आत्मिक संबंध को मज़बूत करना और उसे बनाये रखना हमारा पहला कर्तव्य और सुसमाचार के प्रचार (तथा गवाही) द्वारा उसकी सेवा करना दूसरा।

हम नई सृष्टि (2 कुरिन्थियों 5:17) हैं जो कि पवित्र मेमने (प्रभु यीशु) के पवित्र लहू के द्वारा धर्मी ठहराये गये हैं (रोमियों 3:23-25) तथा पवित्र आत्मा द्वारा (तीतुस 3:5) धोये गये हैं, इसलिये हमारी प्राथमिकतायें अवश्य बदलनी चाहिये। हमें पहले परमेश्वर के विश्राम में प्रवेश करने के विषय में सोचना चाहिये ताकि उसके साथ व्यक्तिगत संगति कर सकें (प्रकाशितवाक्य 3:20) और फिर उसकी सेवा करें। प्रभु यीशु ने हमें सेवक अथवा दास नहीं बनाया बल्कि पहले उसने हमें अपना मित्र (यूहन्ना 15:15), अपने कुटुम्बी (मत्ती 12:50, मरकुस 3:35) तथा अपनी संतान (यूहन्ना 1:12, इफिसियों 1:5) ठहराया है। फिर यदि हम अपने प्रभु से प्रेम करते हैं और उसके दास तथा सेवक जैसे दीनता के स्वभाव को पहचानते हैं तो हम स्वतः ही उस रूप में अपने आपको ढालते हैं और अपने पिता के काम में उसका हाथ बँटाने को पहुँच जाते हैं।

मैंने सीखा कि कभी कभी हम काम की अधिकता को देखकर हिल जाते हैं और पूरी भावुकता के साथ काम में जुट जाते हैं। यह दुनिया ज़रूरतमंद है इसमे कोई दो राय नहीं है और इसलिये हम अपने समझे हुए बोझ के साथ सेवाकार्य करने में लग जाते हैं जबकि यह आज्ञा परमेश्वर की ओर से आनी ज़रूरी है। हमारा परमेश्वर जीवित है और इसलिये हमें अपने जीवित वचन, परिस्थितियों, अन्य सेवकों तथा अपनी मीठी महीन आवाज़ से हमें अपनी इच्छा बता सकता है। और बताता भी है। यदि आप परमेश्वर के काम में लगे हुए हैं तो मैं इसे गलत नहीं ठहरा सकता परंतु आप स्वयं ही जाँचिये कि क्या यह सेवाकार्य आपकी परमेश्वर के साथ व्यक्तिगत आत्मिक संगति में बाधा बन रहा है, यदि हाँ, तो संभवतः आप मसीह के मन (1 कुरिन्थियों 2:16) के साथ नहीं कर रहे हैं।

भावुकता से सेवा नहीं होती। परमेश्वर हमसे प्रेम करता है और हम सब से ज्यादा वो जगत की उत्पत्ति से मानव की दशा को जानता है। आदम तथा हव्वा के पतन (उत्पत्ति 3:1-15) के तुरंत बाद से ही परमेश्वर मानव की अपने कर्मों से उद्धार ना पा सकने की स्थिति को समझता था और इसलिये प्रभु यीशु के मसीहा के रूप में आने की पहली भविष्यवाणी स्वयं परमेश्वर ने ही कर दी थी (उत्पत्ति 3:15) तौभी अपने पुत्र को भेजने में उसने कई हज़ार वर्ष तक इंतज़ार किया। स्वयं प्रभु यीशु भी अपने जन्म के उद्देश्य को जानते थे (लूका 19:10) तौभी अपने जन्म से लेकर 30 वर्ष की आयु तक वो परमेश्वर के सही समय की प्रतीक्षा करते रहे और फिर अपनी सेवकाई शुरू की। इसीलिये हमें भी परमेश्वर के सही समय तथा उसकी सिद्ध इच्छा को जानने के लिये प्रार्थना में समय बिताना चाहिये और परमेश्वर की मर्जी के अनुसार ही सेवाकार्य में आगे बढना चाहिये, इसमें भावुकता का कोई स्थान नहीं है।

प्रभु यीशु जनता के बीच जाकर सेवा कार्य करने से पहले सुबह और शाम को एकांत में जाकर अपने पिता के साथ प्रार्थना में समय व्यतीत किया करते थे। ऐसा करके उन्होंने अपने जीवन से हमें यह उदाहरण दिया है कि हमें भी परमेश्वर के साथ समय व्यतीत करने को प्राथमिकता देनी है। परमेश्वर को हमें अपने पिता की तरह देखना है और उसका भय मानना है,

मालिक की तरह देखकर उसकी आराधना-भक्ति करनी है और अपना मित्र मानकर हमेशा उसपर भरोसा रखना है। यदि हम उसपर विश्वास करें और उससे बात करें तो हमारी सेवा में वो ही हमारी सहायता करता है।

हमें परमेश्वर के साथ एकांत समय देना है और परमेश्वर से प्रार्थना करनी है ताकि उसकी उपस्थिति तथा सामर्थ हमेशा हमारे साथ बनी रहे और हम शैतान के हाथों से भटकी हुई आत्माओं को छीनकर परमेश्वर के राज्य में ला सकें। प्रभु के साथ समय व्यतीत करने और प्रार्थना के समय में न सिर्फ अपने आत्मिक जीवन की उन्नति के लिये प्रयास करना है बल्कि अन्य सेवकों के लिये तथा तैयार खेतों में सेवकों के भेजने के लिये भी विनती करनी है (मत्ती 9:37,38, लूका 10:2)। जब हम प्रार्थना करेंगे तो प्रभु बहुत से सेवकों को तैयार करेंगे ताकि वे जायें और सेवक का सा स्वभाव रखकर आत्माओं को मसीह के लिये जीत सकें।

जब हम काम करते हैं तो हम ही काम करते हैं परंतु जब हम प्रार्थना करते हैं तो परमेश्वर काम करते हैं। जब हम विती करेंगे तो प्रभु बहुत से प्रचारक, शिक्षक, मिशन कार्यकर्ता, उपदेशक तथा पासबान देगा जो परमेश्वर के राज्य में काम करेंगे और इस प्रकार इस बड़े कार्य को कई लोगों में बाँटा जा सके और इसे शीघ्र पूरा किया जा सके। मैं समझता हूँ कि प्रार्थना के द्वारा हम बहुत बड़ा काम पूरा कर सकते हैं जो हम अकेले नहीं कर सकते।

पवित्र आत्मा ने मुझे गवाही सुनाने की परम आवश्यकता को मेरे विश्वासी जीवन की शुरूआत से ही समझाया। शुरू में मुझे बाइबल की गहरी बातें नहीं मालूम थी (अभी भी बहुत सी बातें हैं जो मेरी समझ से बाहर हैं और मैं हमेशा सीखने की कोशिश करता रहता हूँ) और मुझे ठीक से समझाना भी नहीं आता था, पर मुझमें उत्साह था कि मैं बताऊँ कि कैसे एक दिन मैं खोया हुआ था, अंधकार में भटक रहा था, ठोकरें खा रहा था, असफलताओं में पड़ा था, पापों में फंसकर सत्यानाश की ओर जा रहा था और फिर एकाएक मुझे ईश्वर के प्रेम की सच्चाई के बारे में पता चला, मैंने विश्वास किया और सब कुछ बदल गया। मैं प्रभु यीशु में मुझे मिले मोक्ष के बारे में सबको बताने के लिये तैयार रहता था और जो भी मिलता था उससे प्रभु के विषय में और अपने विश्वास की गवाही देने को आतुर रहता था।

जब मैं अपने चारों ओर देखता था तो बहुत सी भटकी आत्माओं को ही अपने इर्दगिर्द पाता था जो कि वैसे ही नाश की ओर जा रही थी जैसे पहले मैं जा रहा था। मैं सिर्फ उन्हें वो रास्ता बताना चाहता था जिसपर चलकर मैं बच गया था। मैं बहुत से प्रश्नों के उत्तर नहीं दे पाता था पर फिर भी मैं अपना मुँह बंद नहीं रखता था, सिर्फ अपने अनुभव के बारे में ही बताकर मैं उनको प्रभु के सुसमाचार के नज़दीक ले आता था, और उसके बाद मैं उन्हें अपनी कलीसिया में ले आता ताकि बाकी काम पास्टर संभाल लें।

परमेश्वर के दिये प्रेम के साथ आप इतना भी कर सकें तो बहुत है। हमें बस बीज लगाना है, उसे उगाना और बढ़ाना प्रभु का काम है।

***

बात कैसे शुरू करें

बहुत से लोग मुझसे यह बात पूछते हैं, परंतु इस का कोई एक निश्चित फार्मूला नहीं है। आप कैसे बात शुरू करें, यह सामने वाले व्यक्ति के व्यक्तित्व, उस समय की परिस्थिति, सुनने वाले की मनोस्थिति आदी कई कारकों पर निर्भर करता है। मैं यहाँ आपको कुछ व्यवहारिक बातें बताना चाहता हूँ, जिनके द्वारा मैं हमेशा बातों का रुख प्रभु यीशु के बारे में करने में सक्षम रहता हूँ। यह बातें हिंदू ही नहीं अपितु किसी भी व्यक्ति के साथ मसीह की बातें करने के लिये लागू किया जा सकता है।

1 पतरस 3:15 के अनुसार सबसे ज़रूरी बातों में से एक तो यह है कि हमें प्रभु को अपने जीवन में पवित्र मानना है और दूसरे हमेशा अपनी आशा के विषय में नम्रता, धीरज और प्रेम के साथ दूसरों को बताने के लिये तैयार रहना है। प्रार्थना में तैयारी सबसे उत्तम तैयारी है और फिर हमें अपना मुँह खोलने के लिये तैयार रहना है क्योंकि प्रभु ने वायदा किया है कि वो हमें अपने आप ही परिस्थिति के अनुसार सही शब्द देगा (भजनसंहिता 81:10, मत्ती 10:19)।

जी हाँ, मेरा तरीका यही है। हालांकि सच कहूँ तो पराये लोगों को गवाही द्वारा सुसमाचार सुनाना आसान है, और उनको बताना जो पहले से ही हमारे पुराने पापों को जानते हैं, बहुत कठिन। कई बार सामाजिक तथा ओहदे की मर्यादा बीच में आ जाती है तो कई बार कुछ और बातें। पर यदि हम अपने आप को शून्य कर प्रभु के चलाये चलकर उन सारी कमज़ोरियों का भी ज़िक्र करें जिनके बारे में वे जानते हैं और फिर आगे बतायें कि प्रभु ने कैसे आपको छुटकारा दिया तो आप उस रूकावट को आसानी से पार कर लेंगे। हमें सामने वाले व्यक्ति की उम्र, तजुर्बे, समझ, व्यवहार इत्यादि को ध्यान में रखकर गवाही बताना चाहिये। धीरे धीरे प्रयास करें तो यह आसान हो जायेगा। इसका सबसे आसान तरीका है कि कलीसिया में हफ्ते दर हफ्ते जब आप संगति में जाते हैं तो गवाही देना शुरू कीजिये – प्रभु को महिमा भी मिलेगी और आपकी तैयारी भी होगी।

कुल मिलाकर हमें अपना उद्देश्य याद रखना चाहिये कि हम गवाही तथा सुसमाचार इसलिये सुनाते हैं ताकि सुनने वाला परमेश्वर के प्रेम के बारे में जान सके और उस पर विश्वास करके आत्मा का उद्धार पा सके। इसके लिये हमें किसी भी विषय से शुरू हुई बात का रुख अपनी गवाही की ओर मोड़ने के लिये तैयार रहना चाहिये। कुछ दिन पहले मेरे एक मसीही मित्र जोड़े के साथ उनके मित्र हमारे घर आये। उनके साथ ऊपर आते समय मैंने देखा कि पति पत्नि दोनों ही देखने में सुंदर हैं और मैंने भाई से कहा कि आपका व्यक्तित्व तो काफी प्रभावशाली दिखता है, और साथ ही अपने पेट पर हाथ फेरते हुए मैंने मज़ाक में यह भी कह दिया कि मैं भी कभी स्मार्ट था और अब तो ऐसा हो गया हूँ। वो कहने लगे कि आप भी तो स्मार्ट हैं और फिर मैंने उन्हें बताया कि मैं पहले कैसा था और अब कैसा हो गया हूँ और इस प्रकार मुझे मौका मिल गया कि मैं अपनी गवाही बताऊँ। मेरी पत्नि हवाईजहाज में आ रही थी तभी पड़ोस में बैठी एक लड़की ने उससे पूछा कि शारजाह में नौकरी तो मिल जायेगी ना, और मेरी पत्नि ने अपनी नौकरी की गवाही से बात शुरू करके उसे प्रभु यीशु के बारे में बता दिया। एक बार मैं चण्डीगढ़ से दिल्ली की ट्रेन यात्रा के दौरान एक किताब पढ़ रहा था जिसका शीर्षक मसीहीयत का विरोधी सा दिखता था (क्रिस्चियनिटी इज़ रिडिक्युलस) और मेरे साथ बैठे उस विद्वान व्यक्ति ने पूछा कि आप तो

ईसाईयों के विरोधी लगते हैं और इस पर मुझे अपने विचार व्यक्त करने का मौका मिल गया। इस प्रकार आप समझ सकते हैं कि यदि हर समय आप मौके की तलाश में रहें तो ज़रूर ही आपको मौका मिलेगा जिसका भरपूर उपयोग कर आप ज़रूर ही गवाही तथा सुसमाचार बता सकते हैं।

परिवार में आप निरंतर बाइबल पढ़ें, प्रार्थना करें और मसीही जीवन जीयें तो आपके परिजन, रिश्तेदार तथा मित्र स्वतः ही आपसे आपके विश्वास के बारे में जानने को उत्सुक हो जायेंगे। हो सकता है कि कुछ विरोध करना चाहे और कुछ सच में जानना चाहें, परंतु दोनों ही मामलों में आपको तो मौका मिल ही जायेगा कि आप अपने विश्वास तथा सुसमाचार की मुनादी अपनी व्यक्तिगत गवाही के द्वारा कर सकें।

आप निम्न बातों को ध्यान में रखकर अपनी गवाही सुनायें तो इसका निश्चय ही बड़ा अच्छा प्रभाव सुनने वाले पर पड़ेगा:

गवाही कैसे सुनायें :
अपनी जीवन की सत्य कथा सुनाते समय आप बतायें कि कैसे कैसे क्या हुआ। निम्न प्रश्न आपकी सहायता के लिये प्रस्तुत हैं -

- प्रभु यीशु को जानने से पहले आपका जीवन कैसा था? आप ईश्वर के बारे में क्या सोचते थे?
- आपके साथ रहने वाले लोग ईश्वर के बारे में क्या सोचते थे? क्या वे लोग जिनसे आप प्रेम करते हैं वे पहले से मसीही थे? आपने पहली बार यीशु मसीह के बारे में कैसे सुना?
- फिर आप बतायें कि आपने मसीह को अपना ईश्वर मानने का निर्णय क्यों लिया। आपकी क्या उम्र थी और आपने कहाँ प्रभु यीशु को अपना उद्धारकर्ता स्वीकार किया?
- आपने कैसे प्रार्थना कर यीशु को अपने जीवन में लिया?
- उद्धार के तुरंत बाद आपने कैसा अनुभव किया?
- क्या आपने किसी के साथ अपना अनुभव बाँटा? यदि हाँ, तो कैसे?
- फिर बताइये कि मसीह को प्रभु जान लेने के बाद से आपके जीवन में क्या हुआ और क्या क्या परिवर्तन तथा आशीषें आई।

व्यक्तिगत गवाही द्वारा सेवा

अपने एक लेख (दी इम्पोर्टेंस ऑफ पर्सनल सोल विनिंग) में अमरीका के एक सुप्रसिद्ध सुसमाचार प्रचारक, उपदेशक तथा मसीही विद्वान डॉ. आर. ए. टोरे (1856 - 1928) ने यूहन्ना 1:41-42 को समझाते हुए ऐसा लिखा कि अपने भाई को प्रभु के पास लाने वाला एक व्यक्ति एंद्रियास था जिसके बारे में हमें ज्यादा कुछ मालूम नहीं चलता कि उसने क्या प्रचार किया, परंतु यह स्पष्ट है कि उसने मसीह से अपनी मुलाकात की गवाही दी, और फिर यह भाई पतरस एक दिन में अपने प्रचार से 3000 लोगों को प्रभु के विश्वास में लाने वाला मनुष्यों का मछुआरा बना।

यदि एंद्रियास ने पतरस से व्यक्तिगत तौर पर गवाही न दी होती तो पतरस कहाँ होता? सभी सेवाओं में भी व्यक्तिगत गवाही द्वारा सेवा का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान रहता है। आप अपनी हरेक परिस्थिति का इस्तेमाल प्रभु की गवाही तथा सुसमाचार का प्रचार (व्यक्तिगत अथवा सामूहिक) उन लोगों को देने के लिये कर सकते हैं जो उस परिस्थिति में आपके साथ हों।

अपनी एक पुस्तक 'व्हाय गॉड यूज़्ड डी. एल. मूडी' (1923) में टोरे ने मूडी (1837-1899 प्रसिद्ध प्रचारक) के अनेक गुणों में से एक 'भटकी हुई आत्माओं के लिये अगाढ़ प्रेम' में उन्होंने बताया कि शिकागो के सिटी हॉल के सामने से गुजरते हुए मूडी ने कार्टक हैरिसन के पार्थिव शरीर को देखने आये लोगों का हुजूम देखा तो तुरंत अपने सहायक टोरे से कहा कि मैं इतनी बड़ी भीड़ को बिना प्रचार सुने नहीं जाने दे सकता। और उन्होंने सिटी हॉल के सामने वाले हूली ऑपेरा हाउस को बुक करने का निर्देश दिया। सुबह नौ बजे शुरू हुई यह सभी शाम के छः बजे तक चली और बहुत सी आत्माओं ने सुसमाचार सुना।

हममें से हरेक में इतना समर्पण, प्रेम, आग, नम्रता, प्रार्थना तथा विश्वास होना ज़रूरी है और हमें व्यक्तिगत तौर पर गवाही द्वारा प्रचार करने के लिये हमेशा तैयार रहना चाहिये। डी. एल. मूडी ने अपने जीवन में एक निर्णय ले लिया था कि अपने जीवन का कोई भी दिन वो ऐसा नहीं गुजरने देंगे जिसमें उन्होने किसी को व्यक्तिगत तौर पर मसीह के बारे में नहीं बताया,

और इसी कारण वो हजारो-लाखों आत्माओं को मसीह का सुसमाचार सुना सके।

व्यक्तिगत तौर पर गवाही द्वारा प्रचार सेवा के कई सकारात्मक पहलू है:

- **इसे <u>कोई भी</u> कर सकता है** : जी हाँ, हम सब प्रचारक भले ही नहीं हो सकें, परंतु गवाह ज़रूर हो सकते हैं। प्रचारक होना प्रभु के आत्मा का चुनाव तथा अभिषेक होता है परंतु गवाह होना हम सबके लिये प्रभु की इच्छा तथा आज्ञा है।

  रोमियों 1:14 में पौलुस कहता है कि मैं यूनानियों और अन्यभाषियों का, और बुद्धिमानों और निर्बुद्धियों का कर्ज़दार हूँ। उसी रीति से हम सभी उन सभी अविश्वासियों के कर्ज़दार हैं जिनको मसीह का सुसमाचार अभी तक नहीं मिला है। अच्छी बात यह है कि हम सभी इसे कर सकते हैं।

  यह शायद सच है कि 3 बच्चों की माँ जो सुबह से शाम तक अपने परिवार की ज़िम्मेदारी में ही व्यस्त रहती हो वह भले ही कहीं बाहर जाकर प्रचार करने में संकोच करे परंतु अपने घर में आने वाली सफाईवाली, सब्जीवाले, दूधवाले, पड़ोसन आदि को अपने जीवन में होने वाले प्रभु के महान कामों की गवाही ज़रूर दे सकती है।

- **आप इसे <u>किसी भी स्थान</u> पर कर सकते हैं** : आप शायद हर जगह प्रचार नहीं कर सकते और आजकल के बदलते समय के चलते तो यह और भी मुश्किल हो चला है। प्रचार के लिये हमें किसी सुनिश्चित स्थान की ज़रूरत पड़ती है, परंतु व्यक्तिगत गवाही आप अस्पताल और बाजार, घर और ऑफिस, मित्र-मंडली में और परिवार के किसी समारोह में कहीं भी कर सकते हैं।

- **आप इसे <u>कभी भी</u> कर सकते हैं** : जी हाँ, व्यक्तिगत गवाही का कोई नियत समय नहीं है। बाइबल कहती है "तू वचन का प्रचार कर, समय और असमय तैयार रह..." (2 तीमुथियुस 4:2) । प्रचार के लिये पहले से समय निर्धारित करना पड़ता है, परंतु व्यक्तिगत गवाही द्वारा सेवा

कभी भी की जा सकती है। जैसा मैंने पहले बताया की मूड़ी ने यह निश्चय किया था कि वो कभी एक दिन भी बिना किसी को सुसमाचार सुनाये अपने बिस्तर पर नहीं जायेंगे, एक दिन बिस्तर पर जाते जाते उन्हें याद आया कि उन्होंने उस दिन किसी को गवाही द्वारा सुसमाचार नहीं बताया। बाहर बरसात हो रही थी और उन्होंने सोचा कि शायद उस दिन वो किसी को गवाही ना दे सकें, परंतु फिर वो बाहर गये और अपने घर के बाहर से ही किसी के छाते के नीचे आकर चलते चलते ही उन्होंने उस व्यक्ति को सुसमाचार सुना दिया।

- **इसमें आप <u>किसी तक भी पहुँच</u> सकते हैं** (धर्म, जाति, पद किसी बात का बंधन नहीं) : जब आप प्रचार करते हैं तो आप एक भीड़ को सम्बोधित करते हैं और आपके प्रचार को बहुत से लोगों तक पहुँचना होता है। इसलिये आप परमेश्वर के वचन के द्वारा तो बात करते हैं और पवित्र आत्मा संदेश को लोगों तक पहुँचता भी है, परंतु आप हर जाति, धर्म को लोगों तक नहीं पहुँचते क्योंकि सभी जाति-धर्म के लोग प्रचार सुनने नहीं आते या नहीं आना चाहते। परंतु व्यक्तिगत गवाही द्वारा आप अपने किसी भी जाति तथा धर्म के मानने वाले मित्र को सुसमाचार दे सकते हैं।

- **यह <u>प्रभावशाली</u> है तथा <u>व्यक्तिगत तौर पर प्रभाव</u> छोड़ता है** : प्रचार के और सभी माध्यमों कि तुलना में व्यक्तिगत गवाही ज्यादा प्रभावशाली होती है। प्रचारक का संदेश ज्यादातर एक व्यक्ति के लिये नहीं होता इसलिये बड़ी भीड़ में बहुत से ऐसे लोग भी होते हैं जो बहुत अच्छे व नामी प्रचारक का प्रचार सुनकर भी रीते हाथ लौट जाते हैं, परंतु एक साधारण से विश्वासी की व्यक्तिगत प्रार्थना तथा गवाही उस पर ऐसा प्रभाव डालती है कि वो मसीह को अपना जीवन दे देता है।

हरेक व्यक्ति की परेशानी तथा परिस्थितियाँ अलग होती हैं, जिसमें उसका ठीक ठीक उत्तर व्यक्तिगत विचार विमर्श में ही मिल पाता है। इसमें सवाल पूछे जा सकते हैं और जवाब दिये जा सकते हैं, और इसीलिये इस तरीके का प्रभाव भी व्यक्तिगत रूप से पड़ता है।

- इसका **परिणाम अत्यंत फलदायक** है : व्यक्तिगत गवाही तथा प्रचार का परिणाम अत्यंत फलदायक होता है। आपकी कलीसिया में यदि सिर्फ पास्टर ही प्रचार करता है तो संभव है कि हरेक व्यक्ति की आत्मिक भूख को शांत न कर सके और खास तौर पर उनकी जो पहली बार चर्च में आते हैं। परंतु व्यक्तिगत तौर पर बात करते हुए आप सामने वाले की सुन सकते हैं, उसके प्रश्नों के जवाब दे सकते हैं, उसे संतुष्ट कर सकते हैं और उसे मसीह को पाने का निर्णय लेने में उसकी मदद कर सकते हैं। एक चेले से दो, फिर दो से चार और इस प्रकार कुल मिलाकर इसका परिणाम अत्यंत फलदायक साबित होता है।

प्रथम सदी में मसीह का सुसमाचार बड़ा उत्साह और उत्तेजन पैदा करता था कि चेले हर दिन घर-घर जाकर और मन्दिरों में प्रचार करते थे (प्रेरितों के काम 5:42)। आज भी हमें वैसे ही उत्साही होने की आवश्यकता है। सोचिये कि जैसे अपने चेलों को पूरी दुनिया में सुसमाचार सुनाने का आदेश दिया वो आदेश आपको आज मिला होता और आप उन 11 चेलों में से एक होते तो आपका क्या उत्तर होता – असंभव', 'क्या बात कर रहे हो', 'यह कैसे हो सकता है' या 'हाँ प्रभु, मैं जाऊँगा, क्योंकि - जो मुझे सामर्थ्य देता है उसमें मैं सब कुछ कर सकता हूँ।' (फिलिप्पियों 4:13)। शुरूआती चेलों की तुलना में आज हम बहुत बेहतर हाल में हैं, हमारे पास तकनीक तथा प्रचार साधन हैं, उतनी सतावट नहीं है, गाड़ियाँ और हवाईजहाज हैं जिनसे जगह जगह पहुँचा जा सकता है। यदि प्रथम चेलों का प्रयास सुसमाचार को हम तक ले आया तो इसे आगे ले जाने से हम क्यों चूक जायें।

आइये, हम आज ही परमेश्वर के साथ अपने संपूर्ण मन से एक प्रतिज्ञा लें कि हम व्यक्तिगत तौर पर इसमें शामिल होंगे ताकि मसीह के सुसमाचार फैल सके और उसका राज्य शीघ्र ही आये।

6

मेरी व्यक्तिगत गवाही

मेरा जन्म 17 फरवरी 1977 को भारत के राजस्थान प्रदेश के जयपुर जिले में रैगर परिवार में हुआ था। मेरे दादाजी रेल विभाग में सेवारत थे। वे राधास्वामी सत्संगी थे। उनके साथ ही साथ, पूरे तौर पर न सही, परंतु आंशिक रूप से तो हम सभी इसी मत के अवलम्बी थे।

राधास्वामी सत्संगियों को सात्विक जीवन जीने की सलाह दी जाती है जिसमें मांस तथा मदिरा का सेवन और मूर्तिपूजा प्रतिबंधित है। सत्संगी को नाम के भजन की कमाई (साधना) करने की शिक्षा दी जाती है जिसके द्वारा वे अपने मोक्ष की ओर अग्रसर हो सकें। इस मत में ऐसा सिखाया जाता है कि गुरू मोक्ष की मूल कड़ी हैं तथा उनके सानिध्य में ही चेले साधना के द्वारा ईश्वर का अनुभव कर सकते हैं। मेरी समझ में कुल मिलाकर ये पंथ भी और धर्मों की भांति कर्मों के द्वारा उद्धार कमाने की शिक्षा देता है जो कि मेरी समझ में नामुमकिन है। नैतिक जीवन जीने के लिये उनकी शिक्षाएँ अच्छी तो हैं परंतु उद्धार कराने की सामर्थ नहीं रखती जो कि सिर्फ़ परमेश्वर के द्वारा संभव है।

*** मेरी विस्तृत गवाही मेरी अन्य पुस्तक 'जीवन से साक्षात्कार' में उपलब्ध है।*

इस मत के विश्वासी होने का प्रभाव ये हुआ कि हमारे घर में मूर्तिपूजा नहीं होती थी। मैं यदा कदा अपने दोस्तों के साथ मंदिर चला जाता था। भजन और साधना वैसे भी मेरे लिए बहुत मुश्किल थी और मूर्तियों में मेरा विश्वास था ही नहीं। सो कुल मिलाकर परमेश्वर के विषय में बेपरवाह हो गया जैसे कि कोई ईश्वर हो ही नहीं।

मेरे पिताजी धार्मिक स्वभाव के व्यक्ति नहीं थे, कम से कम मैं तो ऐसा ही समझता हूँ; परंतु वो सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन में बढ़ चढ़कर भाग लेते थे तथा पिछड़ी जातियों के उत्थान के लिए अथक प्रयास करते रहते थे। मेरी मम्मी एक सरल औरत हैं। मैंने हमेंशा से उनको धार्मिक प्रवृति का ही पाया है। पहले वो बड़ी आस्था से राधास्वामी साधना में लगी रहती थीं। अपने जीवन की परेशानियों का हल ढूंढने के लिए ऐसी शक्ति को ढूंढती थी जो उनकी परेशानियों से उन्हें निज़ात दिला सके। उनको सच्ची शांति सिर्फ़ प्रभु यीशु को अपना उद्धारकर्ता मान लेने के बाद ही मिली।

जब मैं 9वीं कक्षा में था, तब से मुझे याद है कि हर शाम को पापा शराब के नशे में धुत्त लौटते थे और घर में घुसने के साथ ही मारपीट शुरू कर देते थे। उनको गुस्सा होने के लिए किसी सही कारण की ज़रूरत नहीं होती थी। बाद में वो समय भी आ गया जब वो सबके सामने मम्मी और हम सब बच्चों को पीटने लगे। हर शाम को हमारा दिल बैठने लगता था। हम मनाते रहते थे कि शायद आज पापा शराब पीकर ना आएँ पर हमारी दिल की इच्छा शायद ही कभी पूरी होती हो। हर रात आराम से निकालना हमारे लिए एक चुनौती होता था। इस रोज के चलन से हम बहुत दुःखी हो चुके थे और इसका प्रभाव हमारी पढ़ाई पर भी पड़ने लगा। शाम को पढ़ाई में हमारा मन नहीं लगता था। मैं दसवीं कक्षा में दूसरी श्रेणी से पास हुआ, 11वीं में एक विषय में फ़ेल हुआ और 12वीं में पूरी तरह फ़ेल हो गया।

अपनी किशोरावस्था में मैं बहुत दबाया गया, इसलिए आक्रोश मेरे अंदर जमा होता चला गया और जवान होने पर मैं इसे कहीं न कहीं निकालना चाहता था। इसलिए मैं लड़ाई झगड़ों में पड़ने लगा। मैं पढ़ाई में असफ़ल था, बिगड़ा हुआ बच्चा था, गंदा भाई था, परिवार पर बोझ था। हर तरफ़ से हार, असफ़लता और दुख ने मेरा दामन थाम रखा था।

स्कूल की पढ़ाई के बाद, 1995 में मैं कॉलेज गया। कॉलेज की पढ़ाई के पहले साल में मुझे 55% अंक मिले। द्वितीय वर्ष में मैंने कॉलेज के चुनावों में नामांकन पत्र भरा, चुनाव लड़ा और हार गया। इस वर्ष में मेरे 45% अंक ही आए। मैं अंधकारमय भविष्य की ओर अग्रसर था। एक बार मैनें एक बस वाले से किराए के मामले में हुई नोक-झोंक को इतना बढ़ा दिया कि हमने बहुत से वाहनों को रोका, क्षति पहुंचाई, चालकों और सहचालकों को पीटा और यहाँ तक कि एक बस को आग लगाने की भी कोशिश की। ऐसी कुछ घटनाओं के अतिरिक्त ज्यादातर लड़ाईयां मेरी अपनी नहीं होती थीं बल्कि मैं दूसरों के लिए लड़ता था। मैं सोचता था कि दूसरों की सहायता करने से ही शायद मुझे शांति मिले, पर मेरी इस आदत ने कभी कभी मुझे बहुत शर्मिंदा भी किया।

मेरी स्नातक की पढ़ाई के दो वर्षों का औसत 50% ही आ रहा था। ईश्वर के बारे में न तो मैं विचार करता था और न ही उसका कोई भय मेरे मन में था। 'मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है', बस यही सवाल मेरे मन-मस्तिष्क में घूमता रहता था। एक अंजान सामर्थ्य की अगुवाई में मैंने अपने आप ही तीसरे वर्ष में 84% अंक लाने का निर्णय लिया। इसी वर्ष में, भौतिकी के कुछ सवालों के लिए मैंने एक ट्यूशन पढ़ना शुरू किया। उसी ट्यूशन में मेरी मुलाकात रश्मि से हुई। मैं तो उससे दोस्ती करना चाहता था परंतु परमेश्वर की योजना कुछ और ही थी। लड़की जो मेरे लिए एक कमज़ोरी थी उसे ही परमेश्वर ने अपनी महिमा प्रकट करने के लिए इस्तेमाल किया।

वो हिंदू लड़की थी परंतु चर्च जाती थी। मेरे कई बातें पूछने पर उसने बताया कि परमेश्वर ने इंसान को बनाया ही इसलिए कि उसके साथ संगति करे, इसीलिए, यद्यपि पाप के कारण इंसान आज परमेश्वर से दूर है तौभी उसे पाने के लिए अलग अलग तरीके से प्रयास करता रहता है। उसने और भी बताया कि हम अपने सृजनहार अनश्वर परमेश्वर की सृष्टि अपने नश्वर हाथों नहीं कर सकते। किसी ने ईश्वर को नहीं देखा और इसीलिए उसकी सही तस्वीर या मूर्ति बना पाना असंभव है। उसने मुझे बताया कि कैसे परमेश्वर ने इस पूरी दुनिया से, बिना किसी जातिगत तथा धर्मगत भेदभाव के, इतना प्रेम किया कि अपना इकलौता पुत्र दे दिया और यह भी कि कि कैसे यीशु

मसीह ने पापरहित होते हुए भी हमारे पापों की क्षमा के लिए अपने प्राण देकर हमारे सभी पापों की कीमत चुका दी।

उसने मुझे एक गिडियन बाइबल उपहार स्वरूप भेंट की। मैं नास्तिक नहीं था इसलिए उस किताब को फ़ेंका नहीं पर अपने घर में रख लिया। कई महीनों तक मैंने उसे कभी नहीं पढ़ा। एक बार उसने मुझे चर्च (कलीसिया) आने के लिए आमंत्रित किया। पहली बार चर्च जाने का मेरा अनुभव सच में अविस्मरणीय रहा। यह चर्च कतई भी वैसा नहीं था जैसा मैंने सोचा था। वहाँ आराधना के बाद ज़ेवियर अंकल ने मेरे लिए ऐसी वेदना और प्रेम के साथ प्रार्थना की जैसे कि वो मेरे परिवार के भाग हों और हमारे दुख से रोज गुजरते हों। उनकी दुआ में बहुत अधिकार झलक रहा था जैसे कोई बच्चा अपने पिता से अधिकार के साथ कुछ मांगता है। मैंने पहली बार मसीही प्रेम देखा। बाद में रश्मि ने मुझे पास्टर से मिलाया। पास्टर ने एक बात बोली जो मेरे अंदर बैठ गई, उन्होंने कहा, “बृजेश, हम किसी धर्म में विश्वास नहीं करते, बल्कि हम परमेश्वर के साथ एक जीवित संबंध में विश्वास करते हैं।” उन्होंने आगे बताया कि परमेश्वर हमारा स्वर्ग में विराजमान पिता है जिसने हमें पैदा किया है और वो हमसे बहुत प्यार करता है और हम में रुचि रखता है। वो हमें व्यक्तिगत संबंध बनाने के लिए बुलाता है ताकि हम उसके साथ हमेंशा के लिए एक हो जाएँ।

यह सब देखने के बाद मैंने उसके बाइबल पढ़ना शुरू किया। शुरूआत में मैं बाइबल को समझ नहीं पाता था पर रश्मि ने मुझे यह भी सिखाया कि मैं बाइबल को कैसे पढ़ूं। उसने मुझे प्रार्थना करना सिखाया और आराधना के नए नए गीत और भजन सिखाए। तब से मैं बाइबल को एक भूखे व्यक्ति की तरह खाने लगा और प्रभु मुझसे वचनों के द्वारा बातें करने लगे। परमेश्वर ने मेरी अगुवाई करना शुरू कर दिया और आध्यात्म के तथा सफल जीवन के भेद बताना शुरू कर दिया। तीतुस 3:5, 1युहन्ना 1:10, मरकुस 16:16 तथा युहन्ना 3:16, 17 मेरी प्रिय आयतें बन गईं हैं जिन्होंने मेरा जीवन हमेंशा के लिए बदल दिया है।

परमेश्वर ने 1998 में प्रेरितों के काम 16:31 से वायदा किया कि मैं उस पर विश्वास करूँ तो मैं और मेरा घराना उद्धार पायेगा। मैंने ऐसा ही किया और

पाप-क्षमा की प्रार्थना की और बपतिस्मा लिया। फिर मैंने हर दिन अपने परिवारजनों के लिये प्रार्थना करना शुरू कर दिया। मैंने अपने जीवन से उन्हें दिखाया कि विश्वासी जीवन क्या होता है। प्रभु ने अपना वायदा किया और एक एक कर मेरे परिवार के लोगों को बचाया। 1998 में मेरी बहन, 2001 में मेरा भाई, 2002 में मम्मी ने, 2004 में मेरे दादाजी ने विश्वास किया। पापा एक समय मसीहियत से घृणा करते थे 2005 में वो मसीह से प्यार करने लगे। कभी उन्होंने मम्मी से कहा था कि अगर वो चर्च गई तो वो तलाक दे देंगे, बाद में वो खुद अपने साथ गाड़ी में बिठाकर उन्हें चर्च लेकर जाते थे। उन्होंने मम्मी के साथ ही बपतिस्मा लिया और परमेश्वर की आज्ञा को पूरा किया।

मेरी असफलताएँ गायब हो गईं और सफलताएँ एक एक कर मेरे पास आने लगी। परमेश्वर का अनुग्रह निरंतर मेरे साथ रहा और पढ़ाई, नौकरी, पारिवारिक तथा व्यक्तिगत जीवन की सभी परिस्थितियों में परमेश्वर ने मुझे सही निर्णय लेने में मेरी सहायता की। अपनी करूणा में प्रभु ने मेरे लिए कई असंभव कामों को संभव कर दिया। अपने विश्वासियों पर वो करूणा करता है, हमें हर छोटी और बड़ी परिस्थिति में सिर्फ उसपर भरोसा करने की ज़रूरत है।

सन 1998 से 2001 तक मेरे साथ पढ़ने वाली मेरी एक सहपाठिन प्रेरणा को मैंने अपने विश्वास के बारे में बताया और अपने समय में परमेश्वर ने उसके मन में विश्वास पैदा किया और उसने प्रभु यीशु को अपनाया।

अपने विश्वविद्यालय के दिनों में हम लोग हर रोज रात 8 बजे उसके छात्रावास के अतिथियों से मिलने वाले स्थान में मिलकर मेरी गिडियन बाइबल से पढ़ने लगे और साथ साथ में विश्वास में बढ़ने लगे। सितम्बर 2000 में उसने पानी का बपतिस्मा लेकर अपने विश्वास तथा जीवन परिवर्तन की गवाही दी और पुराने तौर-तरीके छोड़कर प्रभु यीशु को विश्वास के द्वारा अपने जीवन का स्वामी करके स्वीकार किया। आज वो आत्मा में नया जन्म पाई हुई प्रभु यीशु की विश्वासी है जो अपने ह्रदय, बुद्धि और बल से परमेश्वर से प्रेम करती है।

इसके बाद 2001 में हम दोनों को, हमारी प्रार्थनाओं के फलस्वरूप एक ही कम्पनी में नौकरी मिली और 2003 में हमारी शादी हुई। अब वो मेरी पत्नी है और मैं प्रभु का धन्यवाद करता हूँ कि परमेश्वर की दया से हम एक अच्छा, संतुलित मसीही परिवार बन सके हैं जिससे कई लोगों को प्रेरणा मिलती है। परमेश्वर ने हम पर अपनी असीम अनुकम्पा के कारण बहुत सी आशीषें दी है और अपनी महिमा के लिये इस्तेमाल किया है। परमेश्वर की विश्वासयोग्यता की और भी बहुत सी गवाहियां हमारे जीवन में है।

शादी के बाद से हमारे घर का यह अलिखित नियम है कि हमारे घर में आने वाला हरेक व्यक्ति सुसमाचार सुनकर ही बाहर जाए। चाहे वह व्यक्ति हमारा सहकर्मी हो, रिश्तेदार हो, दूधवाला हो, पानी पहुँचाने वाला, सफाईवाला, अख़बारवाला, सफाईवाली महरी या पासपोर्ट पूछताछ के लिए आया पुलिसवाला, हमने सबको अपना प्रेम दिखाया और परमेश्वर का मार्ग बताया। हम सोचते हैं कि उनमें से कईयों को (जो विश्वास करेंगे) हम स्वर्ग में देख पायेंगे।

हमने अपने घराने में भी आत्मा के उद्धार का सुसमाचार पहुँचाया है और मसीह के प्रेम के बारे में बताने में हम कभी शरमाते नहीं हैं। कुछ तो विश्वास करने लगे हैं और कुछ अभी मशक्कत कर रहे हैं कि इसपर विश्वास कर सकें। कुछ बेअसर हैं तो कुछ विरोध में, पर हम आश्वस्त हैं कि परमेश्वर अपनी करूणा में सबको स्वर्ग के राज्य के लिए तैयार करेंगे। हम निरंतर प्रार्थना करते हैं और अपनी जीवन की गवाहियां बताते रहते हैं।

गवाहियाँ

मैं यहाँ आपको एक-दो साधारण गवाहियाँ बताना चाहता हूँ जिससे आप यह देखेंगे कि कैसे हम आम विश्वासी होकर भी परमेश्वर के आत्माओं के उद्धार के असाधारण काम में सहभागी हो सकते हैं। इन गवाहियों को बताने का मकसद यह नहीं है कि आप मेरी प्रशंसा करें, बल्कि यह कि आप देखें कि हम कैसी परिस्थितियों में किन किन से कैसे प्रभु परमेश्वर के प्रेम की खुशखबरी अपने आस पास वालों को सुना सकते हैं। इससे आप यह सीख सकते हैं कि कैसे हम मौके को पहचानें और उसका भरपूर इस्तेमाल करें।

रूड़की में लेखराज को सुसमाचार : जब मैं सुसमाचार प्रचार की आवश्यकता और महत्व को नहीं समझता था तब भी प्रभु ने मुझे सिखाया कि कैसे अपनी व्यक्तिगत गवाही से मैं आत्माओं को प्रभु यीशु के बारे में बता सकूँ। जल्द ही प्रभु ने मुझे मौका भी दिया कि रूड़की में अपने सहपाठियों तथा कुछ और मित्रों को सुसमाचार सुना सकूँ। मेरी ही कक्षा में पढ़ने वाले एक मित्र लेखराज ने मेरे द्वारा बताये गये परमेश्वर के प्रेम की खुशखबरी को बड़ा पसंद किया। मेरे उससे काफी अच्छे संबंध बन गये और मैं सहारनपुर में उसके घर भी कई बार गया और उसके परिवार (खासतौर पर उसकी दीदी) को भी प्रभु के विषय में बताया।

एक बार जब मैं अचानक उसके घर पहुँचा और उसे मूर्तिपूजा करते पाया, तो मैंने तुरंत ही उसे टोक दिया। मैंने कहा कि या तो वो उन मूरतों के पीछे चले या फिर जीवित परमेश्वर के, दोनों पर एक साथ विश्वास करना ठीक नहीं है।

मैं सोचता हूँ यह ऐसा है जैसे एक व्यक्ति दो नावों में एक एक पैर रखकर खड़ा हो और दोनों नावें जो एकदम विपरीत दिशाओं में जा रही हों, चल पड़े। तो आप स्वयं ही अंदाजा लगा सकते हैं कि उस व्यक्ति का क्या हाल होगा। चाहे दोनों में से कोई भी नाव ठीक रास्ते पर क्यों न जा रही हो, वह व्यक्ति तो हर हाल में पानी में ही गिरेगा। उसी प्रकार हमें एक ही रास्ता चुनने की ज़रूरत है और वो भी सही वाला, ताकि हम अपने गंतव्य (स्वर्ग राज्य) तक पहुँच सकें। जयपुर से दिल्ली की ट्रेन में बैठकर मुम्बई जाने की इच्छा रखना और फिर दिल्ली पहुँचकर गेटवे ऑफ इंडिया को ढूंढना अपना समय बरबाद करना ही तो है।

खैर, फिलहाल लेखराज ने अपने जिन्दगी भर के पहचाने रास्ते पर चलने का निर्णय ले लिया और बहुत समय के लिये मुझसे और जीवित ईश्वर से बहुत दूर चला गया। मुझे समझ ही नहीं आया कि मैं उसे कैसे बताऊँ की मैं जो बता रहा था वही सच्चाई थी। उसने मुझसे बातचीत करना भी बंद कर दिया था और मैंने सोचा कि मैंने उसे खो दिया है। मैं फिर भी उसके लिये प्रार्थना किया करता था।

इस बात से प्रभु ने मुझे सिखाया है कि हमें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये और कुछ बातें पवित्र आत्मा के लिये छोड़ देनी चाहिये। वही लोगों को कायल कर सकता है और विश्वास में लाता है क्योंकि बिना पवित्र आत्मा के कोई भी नहीं कह सकता कि यीशु ही प्रभु है। इस मामले में मैं बिना पवित्र आत्मा के अपनी ओर से ही ज़ोर लगा रहा था।

पवित्र आत्मा ने अपने समय में काम किया, हमारे संबंध फिर ठीक हो गये और कई सालों के बाद स्वयं उसने यह अंगीकार किया कि वो अब जीवित परमेश्वर पर प्रभु यीशु के द्वारा विश्वास करने लगा था। परमेश्वर अपने समय में काम करता है।

प्रेरणा का उद्धारः मुझे रूड़की में ही अपनी एक सहपाठिन प्रेरणा को सुसमाचार सुनाने का मौका मिला। हम साथ ही में एक ही कक्षा में पढ़ते थे। कुछ समय में ही हम अच्छे दोस्त बन गये थे। मैं ईमानदारी से कहूँ तो कई बार मैं अपने व्यवहार से मसीही जीवन दिखाने में चूक जाता था परंतु प्रभु से मेरे प्रेम ने मेरी इस कमी को ढांप दिया। मैं हमेशा यीशु मसीह के प्रेम तथा उनकी विश्वासयोग्यता के बारे में, अपने विश्वास के बारे में और अपनी प्रार्थनाओं के उत्तर मिलने की बहुत सी गवाहियाँ उसको सुनाया करता था।

हमारी दोस्ती की खातिर वो सब कुछ सुन लिया करती थी पर शायद विश्वास नहीं करती थी। वो बौद्ध परिवार से थी परंतु हिंदू पूजा-पद्धति में विश्वास करती थी और मंदिर जाया करती थी। जब भी मौका मिलता तब मैं उसे प्रभु के बारे में बता दिया करता था। वो अपनी व्यक्तिगत समस्याएँ भी मुझे बताया करती थी और मैं उन्हें बड़े गौर से सुनकर उसे अपनी राय दिया करता था। मैं उसके लिये प्रार्थना भी करता था। वो सोचती थी कि बाकि सभी अन्य भगवानों की तरह ही यीशु मसीह भी एक और भगवान थे, और यह भी कि वो तो ईसाईयों के भगवान थे। मुझे जब भी कभी मौका मिलता, मैं नम्रता के साथ उसे यीशु मसीह की विलक्षणता के बारे में बताया करता था।

मैंने उसे बताया कि ईश्वर एक ही है और उस तक पहुँचने के लिये हमें प्रभु यीशु मसीह में विश्वास करने की ज़रूरत पड़ती है। मैंने उसे अनेक उदाहरणों से बताया कि कैसे प्रभु यीशु ने ही अपने प्राणों का बलिदान कर हमारे पापों की कीमत चुकाई है। मैंने उसे यह भी बताया कि यीशु मसीह ईसाई भगवान नहीं है बल्कि वो तो जगत के रचियता परमेश्वर हैं (यूहन्ना 3:16, 1:1, 14,) जो मानव रूप धरकर आये ताकि हमारा उद्धार करें। उन्होंने कोई धर्म नहीं चलाया बल्कि वो तो सारे जगत से प्रेम करते हैं और जाति, लिंग आदि के कारण हममें कोई भेद नहीं करते। यहाँ तक कि जो उनके समय में धार्मिक (आत्मिक नहीं) लोग थे, उनको प्रभु यीशु ने उनके पाखंड के लिये अपने वचनों से ताड़ना भी दी।

अन्य सब बातों से बढ़कर मेरे ज्वलंत विश्वास तथा मेरी मित्रता ने उसे बाध्य किया कि वो प्रभु यीशु को चखकर जाने कि वो भला परमेश्वर है। उसने अपनी इच्छा से प्रार्थना की और पाया कि यीशु मसीह सच में प्रार्थनाओं के उत्तर देने वाले ईश्वर हैं और उन सब देवी-देवताओं से अलग हैं जिनकी पूजा वो अपने बचपन से करती आई थी। जब वो विश्वास करने लगी तब से हम साथ में बाइबल पढ़ने लगे, प्रार्थना करने लगे, चर्च जाने लगे और हमारा विश्वास साथ में बढ़ता चला गया।

कई बार हमें सुसमाचार का बीज डालने से पहले खेत को तैयार करना पड़ता है, और मित्रता, सहानुभूति, धीरज आदि बहुत महत्वपूर्ण गुण हैं जो हमें ऐसा करने में सहायता करते हैं। भाई ज्योर्ज डेविड ने अपनी पुस्तक 'कम्युनिकेटिंग क्राइस्ट अमंग हिंदू पीपुल्ज़' में इस बात को बड़े अच्छे तरीके समझाया है। उन्होंने साधू सुंदर सिंह के जीवन का एक उदाहरण देते हुए बताया कि उन्होंने एक साधू को गंगा किनारे प्रचार करते देखा जिसकी बातें तो मसीही जैसी थीं परंतु वो बाइबल अथवा मसीह का नाम नहीं ले रहा था। साधू सुंदर सिंह के पूछने पर उसने बताया कि वो मसीही साधू था परंतु बिना जुते खेत में वह वचन का बीज नहीं डालता था, पहले वो उनकी आत्मिक प्यास को जगाता था और फिर उसमें वचन का बीज लगाता था। उस साधू ने बहुत सी आत्माओं को मसीह में जीता था और गंगा नदी में उन्हें जल-दीक्षा (बपतिस्मा) दिया था।

खेत को जोतने का काम बड़ी मेहनत का होता है और उसमें हमें खेत की मिट्टी को नर्म बनाना पड़ता है, उसमें से जंगली झाड़ तथा पत्थर आदि निकालने पड़ते हैं। इसमे समय भी लगता है। वचन के बताने से पहले तैयारी बहुत ज़रूरी है, कहीं वो सत्संग के द्वारा होती है, कहीं मित्रता के द्वारा और कहीं शारीरिक दौड़-भाग की मदद से, और कभी कभी जाकर उनकी परेशानियों में सहानुभूती दिखाने तथा उनके लिये प्रार्थना करने से। मसीही प्रचारकों को हिंदू आत्माओं को जीतने के लिये यह बात सीखना नितांत आवश्यक है।

जयपुर के रास्ते में: मार्च 2005 में मेरे पापा (पिताजी) की तबियत बहुत खराब थी। वो प्रभु यीशु में विश्वास नहीं करते थे और शराब पीने के कारण अपनी मौत के कगार पर थे। मैं बहुत विचलित था और प्रभु की आज्ञा के अनुसार उनसे मिलने दिल्ली से जयपुर गया। पापा का उद्धार तो परमेश्वर का बहुत बड़ा आश्चर्यकर्म है जो हमारी कई सालों की प्रार्थना, सतत मसीही जीवन दिखाने और पवित्र आत्मा के कार्य करने का परिणाम था (यह गवाही मेरी अन्य पुस्तक 'जीवन से साक्षात्कार' में विस्तार से लिखी है) परंतु रास्ते में भी प्रभु ने मुझे मौका दिया कि अपने बगल में बैठी एक महिला से मैं सुसमाचार बाँट सका।

बस में बैठा मैं अपने ही विचारों में खोया हुआ था और शैतान से और दुष्ट विचारों से लगातार लड़ रहा था। मैं एक प्रेरक मसीही किताब पढ़ रहा था तो मैंने पाया कि मेरे पास बैठी महिला कुछ बुदबुदा रही थी। मेरे पूछने पर उसने बताया कि वो महामृत्युंजय मंत्र का पाठ कर रही थी। मैंने सोचा कि यही मौका है कि मैं उसे परमेश्वर के प्रेम के बारे में बताऊँ। मैंने पूछा कि वो इस मंत्र का जाप क्यों कर रही थी और उसने उत्तर दिया कि यह मंत्र अच्छी सेहत के लिये किया जाता है। वो देखने में कुछ बीमार और कमज़ोर सी दिख रही थी।

पवित्र आत्मा ने बड़ी निर्भीकता से उसे यह कहने को कहा कि यदि वो अपनी बीमारियों और कमजोरियों से छुटकारा पाना चाहती हो तो उसे यह पाठ बंद करना होगा और यीशु मसीह में विश्वास करना होगा। साधारणतया मैं एकाएक ऐसी बात नहीं बोलता परंतु उस दिन मैंने ऐसा किया। वो मसीह

के बारे में और जानने की उत्सुक हो गई। मैंने आगे के 4 घंटे के रास्ते में खोलकर उसे सुसमाचार सुनाया और जयपुर पहुँचते पहुँचते उसने प्रभु पर विश्वास किया और मुझे अपने लिये प्रार्थना करने के लिये कहा। मैंने उसे बाइबल के नये नियम की एक प्रति उपहारस्वरूप दी जो मैं हमेशा अपने पास रखता था।

चलते चलते उसने मुझे बताया कि वो एक प्रशासनिक अधिकारी थी और दिल्ली में सेवारत थी। उसने बताया कि पहली बार उसके ह्रदय में एक बड़ा आनंद आ गया था और वो विश्वास करने के लिये तैयार थी। बाद में दिल्ली वापस जाने के बाद भी कई बार उस बहन का फोन आया और मैंने पाया कि परमेश्वर ने उसे अंधकार में से निकाल लिया था और अच्छी सेहत का वरदान भी दिया।

मैंने सीखा है कि जब हम प्रभु की आवाज को सुनते हैं और उसके अनुसार कदम उठाते हैं तो प्रभु हमारी काबिलियत से भी बढ़कर बड़े बड़े काम करता है। मैं जानता हूँ कि मैं तो बस एक बर्तन हूँ और प्रभु ने उसे इस्तेमाल किया कि किसी को तृप्त करे, इसमें बर्तन की (अर्थात मेरी) नहीं बल्कि हमारे परमेश्वर की ही महिमा है, जो प्यासों की प्यास बुझाता है।

बाइबल के सिद्धांत की हमारी समझः बाइबल से हमने प्रभु की सेवा करने का एक सिद्धांत सीखा है। आत्मा से भरा जीवन और प्रभु यीशु से जीवित संबंध होने के अलावा हमें ईश्वर का भय मानना भी ज़रूरी है। हमें अपने आपको पवित्र रखना ज़रूरी है क्योंकि परमेश्वर पाप से समझौता नहीं कर सकता। पाप के कारण हमारी संगति परमेश्वर से टूट जाती है और इस प्रकार वो हमारी नहीं सुन सकता (यशायाह 59:1-2) और बिना उसकी सामर्थ के हम कुछ भी नहीं कर सकते (यूहन्ना 15:5b), आत्मायें जीतना तो फिर और भी कठिन कार्य है।

परमेश्वर की सेवा इस बात में नहीं है कि हम क्या करते हैं बल्कि इसमें कि हम कैसे जीते हैं। प्रभु यीशु अपने पिता की इच्छा पूरी करने के लिये ही इस दुनिया में आये और उसी प्रकार उन्होंने अपना जीवन बिताया।

हमें हर समय सजग रहने की आवश्यकता है कि हम अपना जीवन कैसे जाते हैं। मौके बहुत हैं हमें उन्हें ताड़ने और उसको पूरा भरपूरी से इस्तेमाल करने की आवश्यकता है ताकि हम अपने चारों ओर रहने वाली आत्माओं को प्रभु के पास ला सकें। प्रभु हमे जहाँ भी रखता है उसमे उसकी भली योजना होती है जिसके द्वारा वो हमारी आशा को पूर्ण करना चाहता है (यिर्मियाह 29:12,13) और अपने राज्य को स्थापित करना चाहता है।

मैंने और प्रेरणा ने यह बात साथ में सीखी और इसे अपने जीवन में लागू किया। हमने पाया कि प्रभु बहुत दयालु और विश्वासयोग्य है और अपने लोगों को अपनी मर्जी तथा योग्यता के अनुसार इस्तेमाल करता है। बाइबल बताती है कि हम इस दुनिया के नमक तथा प्रकाश हैं। हालांकि नमक बाकी खाने के अनुपात में बहुत कम हो सकता है परंतु यह सारे खाने का स्वाद बदलने की क्षमता रखता है, ठीक उसी प्रकार हम भी इस जगत का स्वाद बदल सकते हैं और इस अंधकारमय दुनिया में ईश्वर के प्रेम का उजाला फैला सकते हैं।

चाहे आप एक शिक्षक हों या विद्यार्थी, ग्रहिणी या महरी, व्यवसायी या चिकित्सक, अभियंता या सफाईकर्मी, इससे परमेश्वर के प्रेम पर तथा उसकी आपसे अपेक्षा पर कोई भी फर्क नहीं पड़ता। उसे हमारी काबिलियत से नहीं बल्कि हमारी उपलब्धता से सरोकार है। आप जहाँ भी हों वहीं पर प्रभु की रोशनी चमका सकते हैं, भले ही आप विद्यालय में हों या घर में, कार्यालय में या बाजार में, बस्ती में या बस स्टैंड पर, मौके की तलाश में रहें। परमेश्वर पर भरोसा रखें, उसकी काबिलियत में दृढ़ विश्वास रखें, इस दुनिया में उसके प्रेम की आवश्यकता को पहचानें, उसके आपके जीवन में किये महान काम को समझें, प्रभु यीशु के सुसमाचार से ना शर्माएं और अपना मुँह खोलने के लिये तैयार रहें तो परमेश्वर जरूर ही आपके मुँह में सही शब्द भर देगा।

आपको अपनी इच्छा के अनुसार काम में लेने तथा आत्माओं को बचाने के लिये परमेश्वर को आपकी वचन की औपचारिक पढ़ाई तथा डिग्री की आवश्यकता नहीं है। किसी मसीही विद्वान ने कहा है कि जब हम बाइबल

खोलकर प्रचार करते हैं तो वचन से प्रचार करते हैं परंतु जब हम बाइबल बंद कर देते हैं तो अपने जीवन से प्रचार करते हैं।

मैंने पहले बताया कि हमने अपने घर का अलिखित नियम बना लिया कि कोई भी हमारे घर से प्रभु यीशु का सुसमाचार जाने बिना ना जा सके। हमने अपने ऑफिस में भी ज्यादातर लोगों को सुसमाचार बताया। ऑफिस में जिनके साथ सुसमाचार बाँटने का मौका नहीं मिला उनमें से बहुतों को हमने अपने घर में आमंत्रित किया और खाने पीने के साथ उनके ईश्वर का सत्य बताया। उनमें से सभी प्रभु यीशु पर विश्वास नहीं करते पर हमने अपना काम कर दिया।

हमने अपने पास के और दूर तक के कई रिश्तेदारों तक यीशु मसीह द्वारा उद्धार का सुसमाचार हम पहुँचा चुके हैं। जिन तक हम व्यक्तिगत तौर पर नहीं पहुँच सके उसे मैंने अपनी गवाही की किताब 'जीवन से साक्षात्कार' के द्वारा पहुँचाया है ताकि कोई भी इस खुशखबरी से वंचित न रह जाये। इस प्रकार खेत में बीज या तो डाला जा चुका है या तैयारी हो चुकी है और अब जब भी हम कभी उनसे मिलते हैं तो हमारे लिये बातचीत शुरू करना बहुत आसान हो जाता है।

हमारा सेवकाई का जीवन : प्रभु ने जैसे चाहा वैसे ही अपने अन्य अन्य सेवकों के द्वारा हमारा मार्गदशन किया और अपनी महिमा के लिये हमें इस्तेमाल किया। इसमें हमारी कोई योग्यता नहीं है बल्कि यह परमेश्वर का ही अनुग्रह है।

हम दिल्ली में अपनी एक स्थाई कलीसिया के अलावा कभी कभी दूसरी कलीसियाओं में भी जाते थे। हालाँकि दिल्ली बाइबल फैलोशिप ही हमारी स्थाई कलीसिया रही जिसमें हम लगातार तब तक जाते रहे जब तक हम दिल्ली में रहते थे। दिल्ली बाइबल फैलोशिप की इस हिंदी कलीसिया में हमने कलीसिया के बढ़ने का सिद्धांत प्रत्यक्ष रूप में देखा और सीखा है।

दिल्ली बाइबल फैलोशिप की हिंदी सभा के पास्टर देवेंद्र ने हमें एक हिंदू परिवार से आये विश्वासी भाई के घर में बाइबल स्टडी में अगुवाई करने का

मौका दिया। इस दौरान उस परिवार के साथ हमनें यूहन्ना रचित सुसमाचार का गहन अध्ययन किया और परमेश्वर के वचन से बहुत कुछ सीखा और आशीषें पाईं। परमेश्वर ने सच में हमें बहुत दीन किया और सिखाया कि वो अपने जीवित वचन से किस प्रकार हमसे बातचीत करता है और अपनी महिमा और अपनी इच्छा हम पर प्रकट करता है।

यदि आप बाइबल के शिक्षक बनने का बोझ रखते हैं और अपनी कलीसिया और सेवा में ऐसा काम करना चाहते हैं तो औपचारिक अध्ययन नितांत आवश्यक है। मेरे पास ऐसी औपचारिक शिक्षा नहीं है, लेकिन मैं बाइबल के लेखक (पवित्र आत्मा) से ही अपने बाइबल अध्ययन के द्वारा और परमेश्वर के अभिषिक्त लोगों के वचनों के द्वारा बहुत कुछ सीख सका हूँ। फिर भी मैं मानता हूँ कि आत्मायें जीतने के मामले में बाइबल का बहुत सा ज्ञान रखने वाले ऐसे व्यक्ति की तुलना में जो अपने इस ज्ञान को जीवन में लागू नहीं करता और प्रेम में ठंडा है, वो व्यक्ति बेहतर है जिसके पास बाइबल का बहुत से ज्ञान तो नहीं है परंतु आज्ञाकारिता का जीवन है, प्रभु से प्रेम है और आत्मायें जीतने की आग है, और प्रभु का अभिषेक है।

सच कहूँ तो यदि आप परमेश्वर से प्रेम करते हैं और वचन से सीखने की भूख रखते हैं, तो आप भी ऐसी जिम्मेदारी अपने ऊपर लें ताकि आप स्वयं पढ़ें और फिर दूसरों को भी सिखायें। धीरे धीरे आप देखेंगे कि परमेश्वर आपको अपने वचन की बहुत गूढ बातें सिखाना शुरू कर देगा। (इसका मतलब यह कतई भी नहीं है कि औपचारिक शिक्षा का कोई मूल्य नहीं है, परंतु यह कि हम में से हरेक शिक्षक नहीं है और सेवक का ओहदा नहीं रखता, परंतु अपनी गवाही तथा व्यक्तिगत सेवा के द्वारा ही आत्माओं को जीत सकते हैं और उन्हें विश्वास में मज़बूत कर सकते हैं)।

भाई राजकुमार के निमंत्रण और पास्टर देवेन्द्र की संस्तुति पर मैं और प्रेरणा गिदौन इन्टरनेशनल सेवकाई के भाग बने। हम लोग एक साल तक इस सेवा के भाग रहे और अस्पतालों में बाइबल के नये नियम बाँटने तथा मरीजों के लिये प्रार्थना करने में अपना सहयोग दिया। यह भी एक बहुत ही अच्छा तथा दीन करने वाला अनुभव था और प्रभु ने अनेक सांख्यिकी

गणनाओं से बताया कि भारतवर्ष में सुसमाचार प्रचार की आवश्यकता बहुत बड़ी है।

पास्टर देवेंद्र ने ही मुझे राजकुमार भाई द्वारा शांति मार्ग के नाम से उनकी शुरू की गई सेवा में परिचय करवाया और संलग्न किया, इसके लिये मैं प्रभु का और उनका आभारी महसूस करता हूँ। जहाँ पास्टर देवेंद्र से मैंने प्रभु के वचन को मीठे शब्दों में सुनाना सीखा है, राजकुमार भाई के जीवन से मैंने व्यक्तिगत रूप से आशीष पाई है और सीखा है कि तन, मन तथा धन से खर्च होकर प्रभु से प्रेम करना तथा उसकी सेवा करना किसे कहते हैं। उन्होंने मुझे मौका दिया कि मैं जाकर गरीब तबके के अपने भाई बहनों के बीच में वचन तथा प्रार्थना द्वारा सेवा कर सकूँ। बड़े हर्ष के साथ मैंने इस सेवा को अपना लिया और आज भी उनसे जुड़ा हूँ। दिल्ली तथा उत्तर-प्रदेश के ऐटा-अलीगढ़ क्षेत्र में हो रही इस सेवा में बहुत बार गाँव-गाँव जाकर सुसमाचार सुनाने का और प्रार्थना करने का मौका मुझे मिला है। प्रभु इस नम्र सेवकाई को भी अपने राज्य की बढ़ौतरी के लिये इस्तेमाल कर रहे हैं।

जुलाई 2005 में मैं और प्रेरणा अपनी नई नौकरी के चलते संयुक्त अरब अमीरात (यू.ए.ई) आ गये। हमने बीते कुछ वर्षों में जान लिया है कि प्रभु अपने एक निश्चित उद्देश्य के लिये हमें इस अरब देश में लाये हैं। यहाँ भी हमने अलग अलग कई कलीसियाओं में संगति की है और परमेश्वर ने मसीही जीवन के विभिन्न सिद्धांत हमें सिखाये हैं। बहुत सी कलीसियाओं में जाकर अपने जीवन तथा विश्वास के परिवर्तन की गवाही देने का मौका हमें मिला और उसे सुनकर बहुत से लोगों ने आशीष पाई तथा उनका विश्वास मज़बूत हुआ है।

प्रभु ने हमें एक प्रार्थना सभा शुरू करने, बाइबल स्टडी करने, गवाही देने इत्यादि अनेक तरीकों से अपनी मर्जी पूरी करने के लिये इस्तेमाल किया। प्रभु ने हमें संयुक्त अरब अमीरात में रह रहे लाखों मजदूर वर्ग के लोगों के बीच में सुसमाचार तथा वचन द्वारा सेवकाई करने के लिये भी काम में लिया। हम जैसे कई उत्साही विश्वासी इन लोगों के बीच में जाते हैं जो अपने परिवार से वर्षों से दूर हैं और कठिन परिस्थितियों में जीवन बिता रहे हैं ताकि किसी प्रकार अपने परिवार जनों का पालन पोषण कर सकें। वे

सभी प्यार के भूखे हैं और जितने भी सेवक इस सेवा में भाग ले सकें वो कम ही है। यहाँ आकर मैंने सच में देखा है कि इस बात का क्या मतलब है कि फसल बहुत है परंतु काटनेवाले बहुत थोड़े हैं।

धीरे धीरे प्रभु ने बहुत सी आत्माओं को बचाया है। मैं खासतौर पर हिंदी भाषी लोगों के बीच में जाता हूँ और उन्हें प्रभु के प्रेम के बारे में बताता हूँ। यदि प्रभु आपके मन में ऐसा बोझ डाले तो आप इन आत्माओं के लिये प्रार्थना करें।

बड़ी दीनता और नम्रता के साथ हम परमेश्वर के बताये मार्गों पर चल रहे हैं। हमारी विनती और सारे कार्य इसीलिये हैं कि परमेश्वर का राज्य जल्द ही आ जाये। हमारा प्रयास है कि हम अपनी परीधि में आने वाले हरेक व्यक्ति को किसी प्रकार मसीह का सुसमाचार बता दें। हम सभी को यह करना है चाहे इसकी कुछ भी कीमत हमें दुनियावी तौर पर हमें क्यों न चुकानी पड़े। यह जान लीजिये कि स्वर्ग में इसका बड़ा प्रतिफल है। हमारा देश तो स्वर्ग राज्य है और धरती पर तो हम परदेशी हैं। हमें अपने देश में बड़ा धन इकट्ठा करना है क्योंकि वहीं हम हमेशा के लिये रहने वाले हैं।

हमें यह याद रखना चाहिये कि ‘आत्माओं को बचाना परमेश्वर का ही विशेषाधिकार है’ और परमेश्वर स्वयं ही कटिबद्ध है कि अपने राज्य की स्थापना करे। उसे हमारी आवश्यकता नहीं है परंतु वो हमारी सहभागिता चाहता है क्योंकि वो हमसे प्यार करता है। हमें लोगों को बचाने की चिंता नहीं करनी है अपितु यह कि बस हम उन्हें सुसमाचार भर (अपनी व्यक्तिगत गवाही के द्वारा अथवा अन्य प्रचार माध्यम से) सुना दें जो उन्हें समझ में आ जाये, बाकि काम परमेश्वर का है। हमें पहले प्रार्थना करनी चाहिये कि परमेश्वर उनके दिलों की जमीन को तैयार करे ताकि परमेश्वर के वचन का बीज जब उसमें पड़े तो वो उगे और बहुत सा फल लाये। परमेश्वर विश्वासयोग्य है और अपने समय में उनको ज़रूर बचायेगा। अपना काम करने के बाद हम धीरज धरे रहें और परमेश्वर को काम करता देखें, उसमें बड़ा आनंद है।

मैं आपको उत्साहित करना चाहता हूँ कि आप अपने जीवन को परमेश्वर की इच्छा से एकसार कर लें और अपने आपको उस दर्शन के भागी बना लें जो परमेश्वर इस नश्वर संसार के बारे में रखता है, और इस प्रकार आप अनंत आशीषों के हकदार हो जायेंगे।

यह अंत समय है। धर्मशास्त्र बाइबल के अनुसार यीशु मसीह फिर से जल्द ही आने वाले हैं ताकि अपने लोगों को अपने साथ ले जायें। हम परमेश्वर के न्याय सिंहासन के सामने खड़े होंगे और वे जो प्रभु यीशु मसीह के लहू से धुल कर साफ हुए हैं उन पर दंड की आज्ञा नहीं होगी, परंतु वे सभी जिन्होंने मसीह के बलिदान का तथा परमेश्वर के प्रेम का तिरस्कार किया वे पहले से ही अपने ऊपर दंड ला चुके। इसके अलावा वे जिन्होंने मसीह के बारे में कभी नहीं सुना वे अपने विवेक के द्वारा ही दोषी ठहराये जायेंगे यदि उन्होंने अपने विवेक के बताने पर भी पापकर्म किये और ईश्वर की नज़र में अपने आपको अशुद्ध किया है।

प्रिय पाठक, हमारे पास ज्यादा समय नहीं है। यदि आपने प्रभु यीशु पर स्वयं विश्वास नहीं किया है परंतु यह किताब आप पढ़ रहे हैं तो आप अभी ही निर्णय ले लीजिये क्योंकि प्रभु यीशु का आगमन निकट है। परमेश्वर के असीम प्रेम तथा प्रभु यीशु के महान बलिदान का तिरस्कार करने वाले अपने पर ही दंड लाते हैं जो स्वर्ग के अधिकारी होने से वंचित हो जाते हैं। प्रभु यीशु के दूसरे आगमन के बाद बहुत संकट का समय आयेगा और उसके बाद न्याय के दिन आप कहाँ जायेंगे? आप विश्वास करें, उद्धार पायें तथा अपने घराने तथा प्रिय जनों के लिये भी प्रार्थना करना शुरू करें ताकि उनका भी उद्धार हो। हो सके तो आप तुरंत ही प्रभु के राज्य की बढ़ोतरी के महान कार्य में शामिल हो जायें।

बाइबल में हमें एक एक सिद्धांत देखने को मिलता है। हम सबसे पहले तो स्वयं विश्वास करें और फिर अपने परिजनों तथा नजदीकी लोगों को इसके बारे में बतायें, जैसे पहले अंद्रियास ने विश्वास किया और फिर अपने भाई पतरस को इसकी गवाही दी। अपने परिवार के बाद अपने गाँव/शहर (येरूशलेम), देश (सामरिया और यहूदिया) और फिर दुनिया के कोने कोने (पृथ्वी के छोर) में हमें परमेश्वर के प्रेम का सुसमाचार पहुँचाना है। प्रभु ने

कहा है कि फसल तो तैयार है परंतु काटने वाले थोड़े हैं। हमारी प्रार्थनाएं और योगदान वांछित है। जॉन वेसली नामक एक प्रसिद्ध प्रचारक ने कहा है कि परमेश्वर धरती पर कोई भी छुटकारे का बड़ा काम तब तक नहीं करता जब तक उसके सब लोग मिलकर प्रार्थना ना करें।

बाइबल में इस बारें में हमें एक बहुत ही सुंदर वायदा मिलता है (2 इतिहास 7:14 -

"तब यदि मेरी प्रजा के लोग जो मेरे कहलाते हैं, दीन होकर प्रार्थना करें और मेरे दर्शन के खोजी होकर अपनी बुरी चाल से फिरें, तो मैं स्वर्ग में से सुनकर उनका पाप क्षमा करूँगा और उनके देश को ज्यों का त्यों कर दूँगा।"

कलीसिया, प्रार्थना तथा विश्वास के बारे में बाइबल के बहुत से सिद्धांतो की व्याख्या करने वाले मसीही लेखक वॉचमेन नी अपनी एक पुस्तक 'प्रेयिंग मिनिस्ट्री ऑफ दी चर्च' (कलीसिया की प्रार्थना सेवा) में लिखा है कि पृथ्वी स्वर्ग का नियंत्रण करती है और जब तक परमेश्वर की सिद्ध इच्छा और मनुष्य की इच्छा एकसमान न हो जाये, हम मनुष्य उस महान परमेश्वर को उसके कार्यों में सीमित कर देते हैं।

मत्ती 16:19 और मत्ती 18:18-20 में प्रभु यीशु ने इस बात को समझाया है; इसलिये हमें धरती पर ऐसा कुछ करना है जो स्वर्ग में कार्यांवित हो। हमें मिलकर, एक मन होकर, परमेश्वर की सिद्ध इच्छा को अपने अनुभव (रोमियों 12:2), पवित्र आत्मा तथा परमेश्वर के वचन के द्वारा जानकर पृथ्वी पर, वो सब बातें बाँधनी हैं जो शैतान की ओर से हैं और परमेश्वर के विरोध में खड़ी होती हैं और वे सब बातें खोलनी हैं जो प्रभु की मर्जी में हैं ताकि परमेश्वर स्वर्ग से आशीषों की बारिश करें। हम जल्द ही पृथ्वी पर परमेश्वर का राज्य ला सकते हैं।

परमेश्वर हमारी प्रतीक्षा कर रहा है। हमने सेंत-मेंत (मुफ़्त) पाया है तो हम मुफ़्त ही में दें भी (मत्ती 10:8)। आमीन।

7
क्या आप तैयार हैं

जिस प्रकार एक फौजी युद्ध में भाग लेने से पहले कई प्रकार की ट्रेनिंग लेता है, ठीक उसी प्रकार वचन की सही समझ, प्रार्थना का जीवन, पवित्र आत्मा की अगुवाई, प्रचार करने के सही तरीके की जानकारी तथा अपने कार्यक्षैत्र की पूरी जानकारी होना बहुत ज़रूरी है।

सच्चे सेवक को प्रचार कार्य में कूद पड़ने से पहले पूरी तैयारी करनी चाहिये, उनमें प्रार्थना, वचन की समझ, दीनता तथा नम्रता का जीवन तथा उस जाति/समाज विशेष के रीतिरिवाजों तथा संस्कार की पूरी जानकारी प्राप्त करना, जहाँ प्रभू आपको सेवा के लिये इस्तेमाल करना चाहते हैं।

यह कहना आसान है कि हाँ, मैं प्रभु की सेवा करना चाहता हूँ, परंतु क्या आप सच में तैयार हैं? क्या आपने इसकी कीमत समझ ली है? प्रभु यीशु ने चेला बनने की एक कीमत बताई है, अपने आप का इनकार करना और अपना क्रूस उठाकर हर दिन प्रभु के साथ चलना, अर्थात अपनी इच्छाओं तथा ज़रूरतों को भूलकर परमेश्वर की इच्छा पूरी करने के लिये अपने शरीर का दमन करते हुए आत्मिक जीवन जीना (लूका 9:23-24)। सेवक बनने

का मूल्य यह तो है ही, साथ ही में आपको इसमें दुनियावी तौर पर भी बहुत से बलिदान करने पड़ सकते हैं। यदि प्रभु आपसे संपूर्ण समय की मांग करें तो अपनी नौकरी का त्याग, यदि कहीं दूसरे स्थान पर ले जाना चाहे तो अपने ऐशोआराम का त्याग, यदि कोई आधी रात में प्रार्थना कराने आ जाये तो अपनी नींद का त्याग। क्या आप सच में तैयार हैं – नीचे दिये वर्णन से आप समझ सकते हैं कि सच्चा सेवक बनने के लिये आपसे क्या अपेक्षा होगी।

सच्चा सेवक कौन है

वह जो तन, मन, धन तथा पूरे जीवन से प्रभु यीशु की आज्ञाओं पर चलना चाहता है और आत्माओं को प्रभु के पास लाना चाहता है। यह वह व्यक्ति है जो परमेश्वर को प्रसन्न करता है, और ऐसे व्यक्ति के बारे में सीखने के लिये हमें अय्यूब के जीवन से देखना होगा। परमेश्वर ने स्वयं उसके विषय में गवाही दी थी कि वो सच में धर्मी था। अय्यूब की किताब के पहले अध्याय में परमेश्वर उसके विषय में गवाही देता है कि वो धर्मी था, परिवार का अच्छा संचालन करने वाला था, धनी था परंतु सबसे बढ़कर वह परमेश्वर का दास (आयत 8) था। यह परमेश्वर की साक्षी थी। इससे पहले कि आप सेवाक्षेत्र में कदम बढ़ायें, सोचिये कि अंतर्यामी परमेश्वर जो सर्वज्ञानी है और आपके जीवन को संपूर्ण रीति से जानता है, वह आपके विषय में क्या गवाही देता है?

परमेश्वर पुराने नियम में अपने वचन से हमें स्पष्ट तौर पर दिखाता है कि वह अपने सेवकों के साथ एक अंतरंग संबंध तथा घनिष्टता महसूस करता था और इसलिये उन्हें अपना दास कहकर उनका नाम ले लेकर उन्हे संबोधित करता था।

मेरा दास यशायाह – यशायाह अध्याय 20
मेरा दास कालेब – गिनती अध्याय 14
मेरा दास मूसा – गिनती अध्याय 12
मेरा दास अय्यूब – अय्यूब अध्याय 1, आदि।

यह सभी लोग परमेश्वर को समर्पित थे, उनके सोच, विचार, आचार, व्यवहार तथा जीवन की प्रतिदिन की गतिविधियाँ परमेश्वर को केंद्र मानकर ही चलती थीं। कहने का तात्पर्य यह है कि सेवक होने का अर्थ है निम्न तीन बातों का आपके जीवन में समावेश होना – (1) दास अथवा नौकर का सा स्वभाव होना – मत्ती 20:28, 23:11-12, मरकुस 9:35 (2) यह जानना कि सेवा करने के लिये आपको क्या करना है, और (3) निःस्वार्थ भाव से सेवा करना।

यदि आप नौकरी के तौर पर, अथवा कर्तव्य के तौर पर सेवा करते हैं तो आप वो सेवा सच्ची सेवा नहीं है और न ही आप सच्चे सेवक। यदि धन-लाभ, पद-लाभ अथवा यश आपका उद्देश्य है तो भी यह सेवा प्रभु की सेवा नहीं है बल्कि दुनियावी सेवा है। सच्चे सेवक को दास के जैसा स्वभाव लेना पड़ता है। दास कभी भी बुरा नहीं मानता, बल्कि उसके शरीर की सामर्थ से ज्यादा काम भी उसे करना पड़े तो वो करता है। सेवक अपने मालिक की आवाज को पहचानता है और उसके बुलाने पर तुरंत हाजिर होता है, उसके लिये अपने मालिक तथा उसकी आज्ञा से बढ़कर और कुछ नहीं होता। जो कार्य वो करता है वो उसका अपना नहीं होता, और यदि आधे के बीच में मालिक उसे दूसरी जगह जाने और कुछ और काम करने का आदेश दे दे तो वह पहले काम को वहीं छोड़कर मालिक की आज्ञा अनुसार दूसरा काम करने लगता है। वह अपने पहले काम से भावनात्मक रूप से ऐसे नहीं जुड़ जाता कि अपने मालिक की आज्ञा पर दूसरे काम के लिये न जा सके।

सेवक अपने आप से पहले अपने मालिक को और दूसरों को महत्व देता है। वो जानता है कि वो स्वयं तो तुच्छ ही है, और दूसरे उससे बेहतर, और इस कारण वो हमेशा दीन तथा नम्र रहता है। वो अपने काम के बदले में किसी प्रकार का मान सम्मान पाने की उम्मीद नहीं रखता क्योंकि सेवा करना तो उसका कार्य ही है। उसके लिये कोई काम छोटा या बड़ा नहीं होता क्योंकि वो हमेशा अपने मालिक की आज्ञा पूरा करना चाहता है

सच्चा सेवक अपने मालिक के कार्य में तत्परता से लग जाता है। वह स्वयं भी तथा यदि उसके साथ और भी दास हों तो उनको भी सदा उत्साहित

करता है ताकि मालिक का काम उत्तम ढंग से पूरा हो। वह सदैव अपनी ओर से मालिक की मर्जी जानने की इच्छा जानने की कोशिश करता है ताकि उसके बोलने से भी पहले काम शुरू कर दे। कई बार उसे ऐसे काम करने का मौका भी पड़ सकता है जो वो नहीं करना चाहता परंतु अपने मालिक की इच्छा पूरी करने के लिये (लूका 22:42) वह फिर भी उसे करता है। उसे अपने अपमान अथवा इज़्ज़त की इतनी परवाह नहीं होती जितनी कि अपने मालिक के सम्मान की और इसलिये वो हरेक बात में कोशिश करता है कि उसके मालिक के नाम पर किसी प्रकार का दाग उसके कारण न लगने पाये।

अपने मालिक की इच्छा जान लेने अथवा उसका आदेश पा लेने के बाद सच्चा सेवक किसी का इंतज़ार नहीं करता बल्कि अपना कार्य पूरे मन से (कुलु. 3:23) शुरू कर देता है और इस प्रकार उस सेवा को पूरा करता है जिसके लिये उसे नियुक्त किया गया (याकुब 4:17)।

प्रभु यीशु ने अपने जीवन के उदाहरण से हमें सिखाया कि हमें दास बनना ज़रूरी है ताकि हम सच्चे सेवक बन सकें। स्वयं यीशु सारी सृष्टि के मालिक होते हुए भी दास बनकर इस दुनिया में आये। ऐसा नहीं था कि उनके पास सामर्थ नहीं थी या कोई और विकल्प नहीं था, वो जान-बूझकर नौकर बनकर रहे ताकि अपने चेलों को (हमें) सिखायें कि सेवा करने के लिये सबसे महत्वपूर्ण बात क्या है। जहाँ जहाँ भी अपने चेलों से सेवा के विषय में बात की, उन्हें हमेशा दास बनने के बारे में बताया, और यही बात हमें भी सीखनी है। यदि हम इसके लिये तैयार हैं तो हम सेवा के लिये तैयार हैं। इसके अलावा कुछ और गुण मैं यहाँ बताना चाहता हूँ जो एक सच्चे सेवक में ज़रूर पाये जाने चाहिये।

टोरे ने लिखा है कि मूडी में बहुत से ऐसे गुण* थे जिनके कारण प्रभु ने उन्हें बहुत इस्तेमाल किया; उनमें से कुछ गुण निम्नलिखित हैं:

- **वे मसीह को पूर्णतः समर्पित व्यक्ति थे:** ऐसा नहीं है कि मूडी एक दम सिद्ध व्यक्ति थे, परंतु उनका शत प्रतिशत जीवन परमेश्वर को समर्पित था।

**और जानकारी के लिये नीचे दिये लिंक पर पढ़ें या इंटरनेट पर खोज करें*
http://www.whatsaiththescripture.com/Voice/Why.God.Used.D.L.Moody.html

- **वे प्रार्थना में लवलीन रहने वाले व्यक्ति थे:** उनका पूरा भरोसा परमेश्वर में था और वे प्रार्थना के बिना किसी काम को शुरू नहीं करते थे। कई बार वो रात में अपने छात्रों के साथ सुबह 3, 4 या 5 बजे तक भी प्रार्थना करते थे। वे सच में विश्वास करते थे कि परमेश्वर के लिये कुछ भी मुश्किल नहीं है।
- **बाइबल के गहन तथा सतत छात्र थे:** टौरे कहते हैं कि मूडी किसी और विधा के नहीं, थियोलोजी के भी नहीं, अपितु बाइबल के छात्र थे। वे सुबह जल्दी उठकर (कई बार 4 बजे) अकेले में वचन पर ध्यान और मनन करते थे। एक बार टौरे अपने एक दौरे के दौरान मूडी से मिले और रात में बहुत देर हो गई, तौभी जब वो सुबह पाँच बजे उठे तो मूडी को वचन का अध्ययन करते पाया। वचन की यह साधना उनके प्रचार में देखने को मिलती थी।
- **वे बहुत ही नम्र व्यक्ति थे:** हम अच्छे विश्वासी हो सकते हैं पर नम्रता आने और बनाये रखने में सच में बहुत मेहनत लगती है। मूडी बहुत ही नम्र व्यक्ति थे, यहाँ तक कि टौरे लिखते हैं कि इतना नम्र व्यक्ति उन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी में नहीं देखा। वे हमेशा दूसरों को अपने से बेहतर समझते थे और हमेशा पीछे रहने की कोशिश करते थे। उन्हें अपने आत्मिक जीवन पर, अपनी उपलब्धियों पर और अपने नाम की शौहरत पर कभी घमंड नहीं हुआ।
- **वे धन के मोह से पूर्णतः स्वतंत्र थे:** मूडी धनी व्यक्ति थे परंतु अपने लिये पैसा इकट्ठा करने में उन्हें कतई भी रूचि नहीं थी। वर्ल्ड फेयर में उनकी किताबों की प्रदर्शनी पर रोयल्टी उस जमाने में दस लाख डॉलर के आस पास थी, पर उन्होंने वो पैसा लेना उचित नहीं समझा। वो अपनी सभाओं में पहले से ही इस बात की सूचना दे देते थे कि वो किसी भी प्रकार की धन-सेवा स्वीकार नहीं करते थे।
- **अंधकार में खोई आत्माओं को जीत लेने का जज़्बा उनमें कूट कूट कर भरा था:** मूडी ने अपने जीवन में यह निर्णय ले रखा था कि अपने जीवन का एक दिन भी वो कम से कम एक आत्मा को सुसमाचार बताये बिना नहीं बीतने देंगे। अपने बहुत व्यस्त जीवन के बावजूद मूडी व्यक्तिगत तौर पर गवाही देने तथा सुसमाचार सुनाने के लिये समय निकाल लेते थे। एक बार एक व्यक्ति को उन्होंने सुसमाचार सुनाने की

नीयत से पूछा कि क्या वह व्यक्ति मसीही विश्वासी था। व्यक्ति ने जवाब दिया, "तुम अपना काम करो", तो इसपर मूडी का जवाब था कि यही तो मेरा काम है और वही तो मैं कर रहा हूँ। वो अपना समय नहीं खोते थे बल्कि अपनी यात्रा के दौरान, सड़क पर चलते हुए हर समय अपने पास चल रहे व्यक्ति को सुसमाचार सुना देते थे।

- **परमेश्वर की सामर्थ और अनुग्रह से परिपूर्ण थे:** परमेश्वर की सामर्थ के बिना हम वो बड़े बड़े काम नहीं कर सकते जो सिर्फ उसकी ही सामर्थ्य से संभव हैं। मूडी का प्रचार बड़े से बड़े व्यवसायी को, आम आदमी को, राजनेताओं को सबको बराबर प्रेरित करता था कि वो ईश्वर को जाने तथा उसपर विश्वास करें। वो पवित्र आत्मा के बपतिस्मा और उसकी सामर्थ में पूरा विश्वास करते थे और उसके द्वारा ही प्रचार करते थे।

इसके अलावा पवित्रता (और परमेश्वर का भय) और ऐसा गुण है जिसके बिना परमेश्वर हमें इस्तेमाल नहीं कर सकता। हमारे बहुत से अविश्वासी साथी व्यक्तिगत तौर पर यदि हमसे अच्छा नैतिक जीवन जीते हों, तो हमारे लिये सुसमाचार बता पाना और उनको चेला बना पाना बहुत मुश्किल है और शायद नामुमकिन भी। और अपवित्र चाल चलने पर परमेश्वर की सामर्थ भी हमसे दूर हो जाती है और हम अकेले ही अपनी मर्जी से उस काम को करते रहते हैं जो कि हमारा नहीं बल्कि परमेश्वर के आत्मा का है और वो ही हमारे द्वारा उसे पूरा करता है।

क्या आप सोचते हैं कि आप भी इन सब गुणों से परिपूर्ण हैं। यदि हाँ, तो बिना देर किये आप सेवा कार्य में संलग्न हो जायें, और अगर नहीं, तो आप अपनी कमियों को परमेश्वर के सम्मुख रखकर नये सिरे से अपने आत्मिक जीवन को परमेश्वर के सुपुर्द करें और प्रार्थनाओं के साथ सामर्थ और ईश-प्रेम से भरा जीवन जीना शुरू करें। यदि आप अपने आपको परमेश्वर के हाथों में समर्पित कर देंगे तो परमेश्वर अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिये आपका इस्तेमाल भरपूरी से करेगा।

8

निष्कर्ष

प्रिय पाठक, अब तक आप जान चुके हैं कि सच्चा सुसमाचार क्या है, सच्चा सेवक कौन है, हमें क्यों सुसमाचार अपने हिंदू भाई-बहनों तक पहुँचाना है, और ऐसा करने पर विरोध क्यों होता है।

महात्मा गांधी** ने अपने धर्म में पाप क्षमा ना कर पाने की अक्षमता को अपने शब्दों में ज़ाहिर किया। अपने नैतिक जीवन तथा भले कामों के बावजूद उन्होंने कहा कि यह मेरे लिये एक बड़ी वेदना का विषय है कि अभी भी मैं उससे कोसों दूर हूँ जो मेरा जीवन तथा अस्तित्व है, जो मेरी साँसें चलाता है और मेरा सृजनहार है। मैं जानता हूँ कि यह स्वयं मेरी ही कमी है कि मैं उससे दूर हूँ।

कहने का तात्पर्य यह है कि कर्म पर आधारित कोई धर्म उद्धार नहीं करा सकता। सिर्फ प्रभु यीशु पर विश्वास करके, अपने पापों की क्षमा मांगकर और उसे अपना व्यक्तिगत उद्धारकर्ता मानकर ही मानव पापक्षमा, नर्क से मुक्ति और अनंत जीवन पा सकता है।

अब हमें मालूम हैं कि ऐसी कौन सी बाते हैं जिनको ध्यान में रखकर हम परमेश्वर के प्रेम के बारे में उनसे बात कर सकते हैं ताकि वो विश्वास करें और उद्धार पाएं। आइये, निष्कर्ष के तौर पर एक बार फिर से कुछ खास बातों पर हम विचार करें।

*** For it is an unbroken torture to me that I am still so far from Him, who, as I fully know, governs every breath of my life, and whose offspring I am. I know that it is the evil passions within that keep me so far from Him, and yet I cannot get away from them.*

- Mohandas karamchand Gandhi

(http://www.mkgandhi.org/truth/article1.htm)

ध्यान रखने योग्य दस मुख्य बातें

1. बुराई न करें

आप अंधे को अंधा कहकर उससे मित्रता नहीं कर सकते। यह बात तो ठीक है कि उसमें एक कमी है कि वो देख नहीं सकता, परंतु इस कमी को उजागर करके और उस पर प्रहार करके आप सोचें कि वो आपसे मित्रता करे, आपकी बात सुने, तो यह असंभव है। बेहतर है कि आप उस कमी का ज़िक्र भी ना करें और उसकी परेशानियों का हल, उदाहरण के तौर पर उसके अंधेपन का इलाज उसे बतायें तो वो ज़रूर आपसे मित्रता करेगा। उसकी जूती में अपना पैर डालकर देखिये कि उसे कैसा महसूस होता होगा और फिर उससे बातचीत कीजिये और देखिये कि कैसे जीवन परिवर्तन होता है।

2. अपने आप को ऊँचा साबित करने की कोशिश न करें

हममें अपने आप में कोई ऐसी काबिलियत नहीं है जिसके कारण हम अपने आप को किसी से भी ऊँचा या बेहतर समझें। सिर्फ इसलिये क्योंकि आज हम जीवित ईश्वर को जानते हैं हमें किसी से ऊँचा नहीं बनाता। प्रभु के अनुग्रह के बिना आज भी हम उतने ही गिरे हुए हैं जितने की बाकी लोग, इसलिये हम अपने आप पर घमण्ड ना करें, बल्कि अपने परमेश्वर पर घमण्ड करें जो सबको बचाना चाहता है और उस बात कि क्षमता रखता है।

बहुत बार हम अपने आपको अधिक ज्ञानवान, पवित्र अथवा अलग साबित करने की कोशिश करते हैं। हम अलग हैं, इस बात में कोई दो राय नहीं है क्योंकि परमेश्वर ने हमें अलग कर लिया है और अब हम दुनिया के नहीं हैं, परंतु इनमें से कौन सी बात हमारी अपनी काबिलियत से हुई है। कोई भी तो नहीं। परमेश्वर तो चुनता ही है कि हम जैसे निकम्मे और बेकार लोगों को काम का बना दे ताकि सारी महिमा उसको मिले।

बाइबल कहती है कि जो अपने आप को बड़ा करेगा वो छोटा किया जायेगा और जो अपने आपको छोटा करेगा वो स्वर्ग में ऊँचा किया जायेगा। रोमियो 12:3 में परमेश्वर हमें ऐसा ही सिखाता है।

3. परिवेश तथा संस्कृति को बदलने की कोशिश न करें

परमेश्वर ने गिरासिनियों के देश में एक दुष्टात्मा से ग्रसित व्यक्ति को मुक्त किया और फिर उसे अपने लोगों में जाने के लिये कहा (मरकुस 5:19) ताकि वो अपने लोगों को बता सके कि परमेश्वर ने उसके लिये क्या किया। उसी के द्वारा बहुतों ने जाना कि प्रभु यीशु ने क्या किया (मरकुस 5:1-20)।

इतालवी अफसर कुर्निलुयुस ने विश्वास करने के बाद अपने परिवार तथा समाज को नहीं छोड़ा ताकि इब्रानी ईसाई के रूप में जीवन व्यतीत करे बल्कि वो अपने ही समाज में रहा ताकि उसके द्वारा उसका घराना उद्धार का सुसमाचार पाये (प्रेरितों के काम 10:23-24)। उसने अपने तमाम रिश्तेदारों और पड़ोसियों को बुलाया ताकि पतरस से यीशु मसीह का सुसमाचार सुनें।

जब पौलुस लीडिया से मिला जो कि व्यवसाई थी और मसीह के सुसमाचार को सुनना चाहती थी, उसने भी मसीह को विश्वास करने के बाद अपने परिवार तथा समाज से किनारा नहीं (प्रेरितों के काम 16:14-15) किया अपितु उसके विश्वास करने के तुरंत बाद ही इस बात की गवाही परमेश्वर के वचन में मिलती है कि न सिर्फ उसने बल्कि उसके घराने ने भी उद्धार पाया। ठीक इसी प्रकार एक हिंदू व्यक्ति भी जब मसीह में विश्वास करने लगता है तो हमें उसका परिवेश, उसका नाम आदि कुछ भी बदलने की आवश्यकता नहीं है। वह अपने परिवार तथा समाज में रहते हुये अपने जीवन में हुए परिवर्तन से अपने घराने के बहुत से लोगों को नर्क के रास्ते से मोड़कर प्रभु के मार्ग पर लाने वाला हो सकता है। यह तभी संभव है जब वो उनके बीच में रहकर ही अपने जीवन की गवाही से लोगों के मन जीत ले।

मैं गृह-कलीसिया की वकालत नहीं करता हूँ, परंतु कहीं कहीं पर यह एक अच्छा तरीका हो सकता है जहाँ या तो पूरा परिवार एक साथ इतवार को कलीसिया नहीं जा सकता या फिर जहाँ परिवार का एक ही व्यक्ति विश्वास में हो और समाज तथा परिवार का दबाव उसे कलीसिया जाने से रोकता हो। गृह-कलीसिया बाइबल आधारित सिद्धांत (प्रेरितों के काम 16:15, 31-34, 5:42, कुलुस्सियों 4:15, फिलमोन 2). है जो कि किसी भी हिंदू को ज़रूर आकर्षित करेगा।

4. नर्क के बारे में बात करने में जल्दबाजी न करें
डराकर या नर्क का भय दिखाकर हम परमेश्वर के प्रेम के बारे में किसी को नहीं बता सकते। यह सुसमाचार नहीं है। हमें पाप की समस्या के बारे में बताना चाहिये, परमेश्वर के प्रेम के बारे में बताना चाहिये और ईश्वर की उद्धार की योजना के बारे में अपने भाई-बहनों के बताना चाहिये ताकि वो सच्चाई को समझकर और मन फिराकर ईश्वर से प्रेम करने का निर्णय लें।

स्वयं प्रभु यीशु ने वेश्याओं, दुष्ट आत्माओं से पीड़ित व्यक्तियों, बीमारों तथा पाप में पड़े व्यक्तियों को स्वर्ग के राज्य और परमेश्वर की योजना के बारे में बताया परंतु किसी को भी डराकर या लालच देकर अपनी ओर आकर्षित नहीं किया। यहाँ तक कि येरुशलम में प्रवेश करते समय उसके अविश्वास के कारण उनकी आँखों में आँसू थे। नर्क और विनाश की बात करते समय सच में हमारा दिल करूणा और प्रेम से भरा होना चाहिये और आँसुओं के साथ ही इसका वर्णन करना चाहिये।

आप बतायें कि यह परमेश्वर की योजना में नहीं है कि वो आत्माओं का नाश करे। हम अपने आप ही ईश्वर के प्रेम (प्रभु यीशु के बलिदान) का तिरस्कार कर नर्क की ओर जाते हैं।

5. स्वीकार करने के लिये ज़ोर न डालें
कई बार मैंने ऐसा देखा है और स्वयं भी यह गलती की है कि हम सुसमाचार बताने के बाद उस व्यक्ति की प्रतिक्रिया जानने की कोशिश करते हैं और फिर उस पर जोर डालने लगते हैं कि वो विश्वास करे। मैं सोचता हूँ कि विश्वास परमेश्वर का दिया हुआ दान है और बिना पवित्र आत्मा के कोई नहीं कह सकता कि यीशु ही प्रभु है (1 कुरिन्थियों 12:3)।

पवित्र आत्मा को अपने समय में काम करने दें।

वो ही है जो किसी भी व्यक्ति को उसके पापों के विषय में कायल करता है और उसे परमेश्वर की ओर फिरने के लिये तैयार करता है। हम इसे पता नहीं क्यों अपनी हार के रूप में देखते हैं कि हमारे बताने पर उस व्यक्ति ने विश्वास नहीं किया, पर ध्यान रखें, यह हमारा नहीं बल्कि परमेश्वर का काम

है। मैंने पहले भी कहा है और मैं यह पूरी तौर पर मानता हूँ कि घोड़े को पानी के हौज तक लाना हमारा काम है, उसे प्यासा करना परमेश्वर का और पानी पीना उसका स्वयं का। हम अपना काम करें और उन्हें अपना काम करने दें। हाँ, जब भी मौका मिले तब तब उत्साहित करते रहें ताकि अन्ततः वो विश्वास करे और उद्धार पाये।

6. हिंदू समझ का सम्मान करते हुए अच्छे नैतिक, आध्यात्मिक तथा नम्र जीवन का प्रदर्शन करें

मसीह-केन्द्रित जीवन दिखायें। मैंने जैसा पहले लिखा है कि एक आम हिंदू नैतिक रूप से अच्छे व्यक्ति की जिसका आचरण स्वच्छ हो और जिसकी कथनी (वचना) और करनी (कर्म) में विरोधाभास न हो, उनका आदर अवश्य करते हैं और उनसे ईश्वर के सत्संग सुनने के लिये तैयार रहते हैं।

सुनने वाले के बौधिक तथा आत्मिक स्तर पर जाकर उसे बात करें तो वो खिलाफत नहीं करेगा बल्कि आपकी बात आराम से सुनेगा। पहले ईश्वर तथा सृष्टी में प्रकट उसकी महिमा से बात शुरू करें, और फिर अपने जीवन में हुए बदलाव का वर्णन करें। कोई भी आपके अनुभव की काट नहीं कर सकता। धीरे धीरे बात प्रभु यीशु पर लायें और फिर उसे सब बातों का केंद्र बनाये रखें। स्टेनले जोन्स भारत में हिंदू व्यक्तियों के बीच प्रचार के अपने अनुभव के बारे में लिखते हुए कहते हैं कि प्रभु यीशु के व्यक्तित्व, उनकी बातों तथा उनके जीवन में सारा सुसमाचार है। उनके जीवन के बारे में बात करें तो उससे आपका काम भी आसान हो जायेगा और बात में बल भी रहेगा क्योंकि पिछले 2000 सालों के इतिहास में कोई भी ईमानदार व्यक्ति प्रभु यीशु के जीवन में कोई कमी नहीं निकाल पाया है।

प्रभु यीशु के अलावा किसी भी दूसरे विषय अथवा पहलू को छूने की कोशिश न करें अन्यथा आप व्यर्थ समय बरबाद करेंगे। पुराने नियम और ईसाईयों की प्रथाओं के बारे में उनके प्रश्नों को कम शब्दों में ही किनारा कर प्रभु यीशु के जीवन, बलिदान, पुनर्त्थान तथा मोक्ष के बारे में बाते करें, जो श्रेयस्कर है। आप स्वयं भी मूर्तिपूजा तथा हिंदू देवी देवताओं इत्यादि विषयों से बचकर पाप क्षमा तथा अनंत जीवन के विषय में ही बातचीत करें। पाप अपने आप में एक ऐसा विषय है जिसे बहुत से लोग ठीक से न तो समझते

हैं और न समझाते हैं। परमेश्वर की आज्ञा को तोड़ना ही पाप है इस बात को बहुत सरल शब्दों में समझाना आपका प्रथम उद्देश्य होना चाहिये ताकि वे समझ सकें कि पाप उन्हें ईश्वर से हमेशा के लिये अलग कर सकता है। मूर्तिपूजा को पाप बताकर मोक्ष की बात करना ठीक नहीं है, बल्कि क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार तथा अन्य वैचारिक तथा कर्म पाप के विषय में बात करके उन्हें आप ईश्वर की आवश्यकता को समझायें तो आपका काम पूरा हो गया।

7. सुनने के लिये भी तैयार रहें

बहुत बार हम सुनाने के लिये तो आतुर रहते हैं, परंतु सुनने के लिये नहीं। दूसरे की सुनने के लिये भी तैयार रहें। इसके लिये हमें बहुत धैर्य की आवश्यकता है, क्योंकि संभवतः आपसे बात करने वाला व्यक्ति अपने धर्म, ईश्वर के बारे में अपनी सोच और कुछ चमत्कारों का भी वर्णन करे और आप निरंतर यह सोचते रहें कि शैतान ने इसे कितने बंधनों में बांध रखा है और आप उसकी बात पूरी सुने बिना ही उसे बीच में काटकर प्रभु यीशु के बारे में बताने लगें।

अगर आप चाहते हैं कि जब आप प्रभु यीशु के बारे में कुछ बोलें तो वो शांति से पूरी बात सुने तो आपको भी सुनने के लिये तैयार रहना चाहिये। यदि समय का अभाव हो और पहली मुलाकात में आपकों सिर्फ सुनने का ही मौका मिले तो भी ज़रूर सुनें। हाँ, यदि आपकी मुलाकात ही एक ही बार की है और आपको मालूम है कि आप फिर उस व्यक्ति से नहीं मिलने वाले हैं तो आपने समय को ऐसा बाँट लीजिये कि आप सुनें भी और सुनायें भी। उनसे सिर्फ मुख्य बातें बोलने कि विनती करें और फिर जब आपको मौका मिले तो आप भी कम शब्दों में सुसमाचार बतायें।

किसी पहले से भरे चाय के कप में यदि आप पेप्सी डालना चाहते हैं तो आप क्या करेंगे? चाय से भरे कप में पेप्सी डालकर आप दोनों को ही बेकार कर लेंगे, बेहतर है कि पहले आप चाय का कप खाली करें, उसे धोयें और फिर उसमें पेप्सी डालें। इसी प्रकार, पहले आप सामने वाले की पूरी बात सुनकर उसे खाली करें, जब उसमें पुराना कुछ ना रहे तो मन में प्रार्थना करें

ताकि प्रभु उसे धोये और तैयार करे और फिर आप प्रभु यीशु का सुसमाचार उसे सुनायें जिससे वो जीवन पाये।

8. विरोध होने पर प्रतिकार ना करें

ना चाहते हुए भी कई बार हमें विरोध का सामना करना पड़ता है। एक बार जब हम गिडियन सेवकों के साथ दिल्ली के एक अस्पताल में बाइबल के नये नियम बाँट रहे थे तो एक लड़की ने नया नियम लिया परंतु उसकी माँ ने उससे धीरे से कहा कि इसे वापस कर दो। परंतु लड़की ने ऐसा नहीं किया। लेकिन थोड़ा आगे बढ़ते ही एक मुसलमान भाई ऊँची आवाज में विरोध करने लगा। इस पर वह औरत जो पहले चुप थी, एकाएक बोलने लगी कि तुम लोग धर्म परिवर्तन करते हो इत्यादि।

थोड़ा शोर होने पर कई लोग जमा हो गये और हमें धमकी देने लगे और धक्का देने लगे। उन्होंने हमसे कहा कि हम अभी RSS और बजरंग दल वालों को बुलाते हैं और तुम्हें पिटवाते हैं। बहुतों नें, जिन्होंने पहले नया नियम की प्रति ले ली थी, उन्होंने भी वापस कर दी और हमें चले जाने को कहा। हमने किसी प्रकार का विवाद भी नहीं किया और न ही गुस्सा किया क्योंकि बाइबल में यह स्पष्ट है कि जब यीशु मसीह का विरोध हुआ था तो हमारा भी होगा। हमारे चेहरों पर शांति थी और हम बाहर आ गये और दूसरी तरफ में जाकर नये नियम बाँटना शुरू कर दिया।

कहने का तात्पर्य यह है कि हमें विरोध का प्रतिकार गुस्से के या अपनी सफाई देकर करने की आवश्यकता नहीं है, हमें बस उस परिस्थिति से बच कर निकल जाना है और अपना कार्य करते रहना है। किसी भी सूरत में, हममें उनके प्रति द्वेष भावना ना जन्म ले ले, इस बात का बहुत ध्यान रखने की आवश्यकता है क्योंकि ऐसा हो गया तो समझ लीजिये कि शैतान अपनी चाल में सफल हो गया। उड़ीसा में और भारत के भिन्न भिन्न हिस्सों में मसीहियों पर हो रही हिंसा शैतान की ऐसी ही एक चाल है जिसमें हमें सर्प की तरह चतुर-चालाक और कबूतर की तरह भोले रहकर जीवन जीना है।

9. सही शब्दों का इस्तेमाल करें

जब आप एक हिंदू व्यक्ति से बात करें, तो यह बहुत ज़रूरी है कि आप सही शब्दों का चयन करें और उनका ही उपयोग अपनी बातचीत के दौरान करें। उन विषयों और शब्दों का उपयोग कतई भी ना करें जो धार्मिक भावनाओं का अनादर करते हों और सुनने वाले व्यक्ति के मन में दीवार खड़ी कर दे कि वो आपकी बात सुने (या समझे) ही नहीं या उससे भी बुरा कि वो आपका विरोध करना शुरू कर दें। ऐसे आध्यात्मिक शब्दों का इस्तेमाल करना अच्छा है जिन्हें सुनने की उसे आदत है और जिनसे उसे ईश्वर के बारे में सोचने में सहायता मिले और वह स्वयं ही कायल हो जाये।

सुनने वाला व्यक्ति यदि आपके अथवा आपके विश्वास (प्रभु यीशु तथा उनके जन्म आदि विषय) के बारे में गलत बात भी करे तो भी आप अपनी भावनाओं को काबू में रखें और संयम के साथ ही सही शब्दों में उसकी बातों का उत्तर दें और उसकी जिज्ञासाओं को शांत करें। याद रखें कि वो इसलिये ऐसी बातें करता है क्योंकि उसकी आत्मिक आँखें बंद है और उसे समझ नहीं आता है।

यदि आपके पास आँखें हैं और आप किसी अंधे व्यक्ति से टकरा जायें तो गलती आपकी है। यदि वो भी अपनी गलती से आपसे टकरा गया तो भी आप उसको भला बुरा कहें या उस पर दोष लगायें तो वो ठीक नहीं है। किसी भी सूरत में उस व्यक्ति को आपसे दया तथा सहिष्णुता ही मिलनी चाहिये क्योंकि वो देखने में असमर्थ है और इसीलिये टकराता है। जब उसकी आँखे खुल जायेंगी तो वो भी देखने लगेगा। इसलिये अभी आपकी जिम्मेदारी यह है कि आप सही मार्ग देखने में उसकी सहायता करें।

10. प्रार्थना के बिना आगे ना बढ़ें

प्रार्थना विश्वासी जीवन की सांस है। जैसे शारीरिक जीवन में हम बिना सांसों के नहीं जी सकते उसी प्रकार प्रार्थना के बिना हमारा विश्वासी जीवन मृत हो जाता है। इसलिये ही बाइबल में सदा प्रार्थना में लगे रहने (1 थिस्सुलुनिकियों 5:17) के बारे में सिखाया है। जब हम शब्दों में प्रार्थना नहीं कर रहे होते हैं तब भी हम विश्वास, आस्था और प्रेम से परमेश्वर से निरंतर

बात करते रहते हैं जो कि प्रार्थना है। इसके अलावा पवित्र आत्मा से अन्य भाषाओं में प्रार्थना करने का वरदान प्राप्त करना भी बहुत अच्छा विकल्प है ताकि आत्मा में प्रार्थना हो, हो सकता है कि आपका दिमाग कुछ ना समझे (1 कुरिन्थियों 14:2) परंतु आपकी आत्मा मज़बूत होगी और परमेश्वर की सेवा करने के लिये तत्पर हो जायेगी।

जब हम प्रार्थना करते हैं तो यह हमारा परमेश्वर के सम्मुख एक अंगीकार होता है कि प्रभु अपनी सामर्थ्य में हम कुछ नहीं कर सकते इसलिये आप पर निर्भर करते हैं, आप हमारे द्वारा काम कीजिये, आत्माओं को सुसमाचार सुनाइये, उनके मनों को तैयार किजिये और उनका उद्धार कीजिये। इसके अलावा प्रार्थना में हम परमेश्वर पिता की उपस्थिति में जाते हैं और पवित्र आत्मा के द्वारा अपने प्रभु यीशु के साथ संगति करते हैं जिससे हमारा विश्वास पक्का होता जाता है, संबंध मज़बूत होता जाता है, हम आत्मा में बल पाते हैं ताकि मसीह के जैसा पवित्र जीवन जी सकें और परमेश्वर की सिद्ध इच्छा हमें मालूम होती जाती है।

ऐसा करके जब हम आगे बढ़ते हैं तब ही स्वर्ग का राज्य पृथ्वी पर आता जाता है और धरती पर परमेश्वर की इच्छा पूरी होने लगती है जैसी स्वर्ग में भी होती है। आमीन।

बाँटें जीवन के मोती

अपने हिन्दू भाई बहनों को परमेश्वर के प्रेम का सुसमाचार कैसे सुनायें

लेखक के विषय में

बृजेश चोरोटिया का जन्म भारत के राजस्थान प्रदेश में हिंदू परिवार में फरवरी 1977 में हुआ। उन्होंने अपनी शिक्षा जयपुर तथा रूडकी में भूविज्ञान के क्षेत्र में पूरी की।

जब वो कॉलेज में अपनी पढाई पूरी कर रहे थे तब हिंदू परिवार से मसीही विश्वास में आई एक बहन उनसे मिली जिन्होंने यीशु मसीह का सुसमाचार उन्हें सुनाया और एक बाइबल भेंट की। वे प्रार्थना करने लगे और जीवित परमेश्वर से हुए इस साक्षात्कार ने उनका जीवन बदल दिया।

धर्म तथा आध्यात्म की अपनी खोज में उन्होंने अपने निष्कर्ष निकाले। पहला कि सभी धर्म एक समान हैं और जीवन जीने के लिए नैतिक शिक्षा देते हैं परंतु परमेश्वर से मिलन कराने में असमर्थ हैं तथा दूसरा कि परमेश्वर कोई बहुत दूर नहीं है जिस तक पहुंचा नहीं जा सकता बल्कि वो हमसे इतना प्रेम करता है कि वो स्वयं धरती पर यीशु मसीह के रूप में उतर आया ताकि हमारे पापों को क्षमा करे ताकि उसके साथ हम व्यक्तिगत संबंध बना सकें।

पुस्तक के विषय में

परमेश्वर ने उनके मन में एक बोझ डाला कि अपने जीवन की गवाही लिखें कि कैसे परमेश्वर ने उनके जीवन में मोक्ष का आश्चर्यजनक काम किया। यह पुस्तक ईश्वर को जीवंत रूप में दिखाने का एक प्रयास है।

यह किताब उन सवालों के जवाब देने का भी प्रयास करती है जो कि उन लोगों के मन में उठते हैं जो ईसाई परिवार में पैदा नहीं हुए परंतु जिन तक प्रभु यीशु का सुसमाचार पहुंचा है।

आप अपने विचार व अतिरिक्त सवाल ई दृ मेल ठैवतवजपं/हउंपसण्बवउ कर सकते हैं।